आई एस एस एन : 0972-169X
पंजीयन क्रमांक 70269/98 के अंतर्गत भारत सरकार के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत
डाक पंजीयन क्रमांक : डी एल : 11360/2004

ड्रीम 2047

फरवरी 2004 | खण्ड 6 | अंक 5 | मूल्य रुपए : 5.00

विज्ञान प्रसार समाचार

श्री एम.वी. कामथ पद्मभूषण से सम्मानित

श्री एम.वी. कामथ, अध्यक्ष, विज्ञान प्रसार सोसाइटी को राष्ट्र को समर्पित उनकी सेवाओं के लिए भारत सरकार ने वर्ष 2004 के पद्मभूषण अलंकरण प्रदान करने की घोषणा की है। वह देश का वरिष्ठतम पत्रकारों में से एक हैं और अपनी विश्लेषणात्मक टिप्पणियों के लिए उनका बहुत आदर है। वह प्रसार भारती के अध्यक्ष भी हैं। श्री कामथ को यह सम्मान दिये जाने के लिए विज्ञान प्रसार की ओर से हार्दिक बधाई। विज्ञान रेल की परिकल्पना भी श्री कामथ ने ही की थी।

इस अंक में

संपादकीय

शुक्र का पारगमन और खगोलीय इकाई (पृष्ठ 3)

फ़ादर यूज़ीन लाफों (पृष्ठ 10)

नाभिकीय अनुसंधान प्रयोगशाला (पृष्ठ 16)

शिवराज रामशेषन (पृष्ठ 18)

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ..... (पृष्ठ 20)

तारुण्य के छोटे–छोटे रहस्य (पृष्ठ 21)

जारी है विज्ञान रेल यात्रा

विज्ञान रेल के बारे में लोगों की प्रतिक्रिया वास्तव में जबरदस्त है। प्रत्येक पड़ाव पर कम से कम 20 से 30 हजार लोग प्रतिदिन विज्ञान रेल देख रहे हैं। दूर–दराज के क्षेत्रों से लोग इस अनोखी पहियों पर विज्ञान प्रदर्शनी को देखने आ रहे हैं। विद्यालयों के छात्र गहरी रुचि दिखा रहे हैं। सभी स्थानों पर इस घटना को प्रिंट और इलेक्ट्रानिक मीडिया द्वारा विस्तार से कवर किया गया है।

विज्ञान रेल 6 जनवरी, 2004 को बरेली पहुंची तथा वहां 8 जनवरी, 2004 तक रुकी रही। श्री बची सिंह रावत, माननीय राज्य मंत्री, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने इस प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। श्री संतोष गंगवार, राज्य मंत्री, भारी उद्योग भी मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। दो लाख से भी अधिक लोगों ने प्रदर्शनी की यात्रा की। करीब 130 विद्यालय अपने छात्रों को प्रदर्शनी दिखाने के लिए लेकर आये। बहुत अधिक भीड़ के कारण प्रदर्शनी को 8.30 सुबह से 11 बजे रात तक खुला रखा गया।

इसके बाद विज्ञान रेल ने लखनऊ की यात्रा की, जहां वह 9 जनवरी, 2004 से लेकर 13 जनवरी, 2004 तक रुकी रही। डॉ. नानिथ सहगल, जिलाधिकारी, लखनऊ और आर.के. सिंह, डीआरएम, उत्तर केन्द्रीय रेलवे ने संयुक्त रूप से प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। स्कूली छात्रों सहित 1.5 लाख से ज्यादा लोगों ने लखनऊ में प्रदर्शनी देखी।

शेष पृष्ठ ..... 22 पर जारी

श्री संतोष गंगवार, राज्य मंत्री, भारी उद्योग और श्री बची सिंह रावत, राज्य मंत्री, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विज्ञान रेल का बरेली में अवलोकन करते हुए

इलाहाबाद में विज्ञान रेल के उद्घाटन के समय दृशकों का एक समूह

...वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक ढंग से करें ... वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक ढंग से करें ... वैज्ञानिक ढंग से सोचें, वैज्ञानिक...

विज्ञान प्रसार के लिए डॉ. सुबोध महंती द्वारा सी–24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली 110 016 से प्रकाशित तथा उन्हीं की ओर से सौरभ प्रिंटर्स प्रा. लि., बी–280, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया फेस – 1, नई दिल्ली 110 020 द्वारा मुद्रित
सम्पादक : डॉ. विनय बी. काम्बले

मंगल पर सैर

1877 में गियोवान्नी वर्जीनियो सियापरेल्ली (1835–1910), इटली के एक खगोलज्ञ ने मंगल का पहला 'आधुनिक' मानचित्र बनाया, जिस पर उसने एक प्रणाली को दिखाया जिसे उसने 'कनाली' नाम दिया। इटली में *कनाली* का अर्थ 'चैनल' होता है और अंग्रेजी में इस शब्द का अनुवाद 'कैनाल' के रूप में किया गया जिसका अर्थ होता है उत्कृष्ट डिजाइन। 1910 में, अमेरिकी खगोलज्ञ एवं प्लूटो ग्रह के खोजकर्ता पर्सिवल लॉवेल (1855–1916) ने एक नष्ट होते ग्रह का एक अप्रतिरोध्य चित्र चित्रित किया, जिसके निवासियों ने मंगल के ध्रुवीय क्षेत्रों से जल वितरित करने के लिए एक विस्तृत सिंचाई प्रणाली निर्मित की थी। इसके बाद, मंगल के 'पृथ्वी जैसा' होने का उसका विचार और भी अधिक रोमांचक सिद्ध हुआ।

अंतरिक्ष युग की शुरुआत में, यह माना गया था कि मंगल पर पृथ्वी के घनत्व के लगभग दसवें हिस्से के बराबर वायुमंडल है, ध्रुवों पर जल व बर्फ की टोपी है जो मौसम के साथ बढ़ता–घटती रहती है, और वर्ष में एक बार 'अंधकार की लहर' आती है जिसको प्रायः वृद्धिशील पौध जीवन के रूप में व्याख्यायित किया जाता था। जो भी हो, 1960 के दशक में, पृथ्वी से किये गये अवलोकनों तथा प्रक्षेपित अंतरिक्षयानों ने लॉवेल के मंगल संबंधी विचार के अंत की शुरुआत का संकेत दिया। संयुक्त राज्य अमेरिका के मैरिनर 4, 6 और 7 अभियानों ने चन्द्रमा सदृश और अति ऊबड़–खाबड़ सतह के चित्र भेजे। वायुमंडल प्रायः शुद्ध कार्बन डाइऑक्साइड के रूप में और पृथ्वी के घनत्व के सिर्फ 100 वें भाग के बराबर पाया गया तथा ध्रुवीय टोपी पूरी तरह से जमी हुई कार्बन डाइऑक्साइड सिद्ध हुई। मंगल के पहले गोलाकार चित्र 1972 में मैरिनर 9 ऑर्बिटर द्वारा भेजे गये, जिससे यह पता चला कि पूर्व के प्रक्षेपण अभियानों द्वारा दिखाये गये दृश्यों की अपेक्षाकृत यह ग्रह ज्यादा जटिल है, जहां बड़े–बड़े ज्वालामुखी, एक काफी बड़ी नहर प्रणाली, दिखाई दिये। लेकिन 'अंधकार की लहर' सतह पर चलने वाली धूलभरी हवा के मौसमी पुनर्वितरण के परिणामस्वरूप देखी गयी। वायुमंडलीय संघटन और घनत्व की पुष्टि हो गयी, तथा पृथ्वी मंगल ग्रह के पृथ्वी जैसा होने के अधिकांश प्रमाण असत्य साबित हुए।

किन्तु इन सभी रहस्योद्घाटनों के बावजूद उसकी सतह पर जीवन की संभावना से अभी भी इंकार नहीं किया सकता। इसलिए 1976 में अमरीका के *वाइकिंग* लैंडर्स–*वाइकिंग 1* और *वाइकिंग 2* – मंगल की सतह पर किसी भी रूप में जीवन की संभावनाओं का पता लगाने के लिए परिष्कृत उपकरण लेकर गये। दोनों लैंडर्स ने मंगल के सूक्ष्म जीवों की खोज के लिए प्रयोग किये। लैंडर्स ने मंगल के तराई क्षेत्र के विस्तृत रंगीन विशालदर्शी चित्र प्रदान किए। उन्होंने मंगल के मौसम का पर्यवेक्षण भी किया। हालांकि वे उन दोनों अपने उतरने की जगहों जीवन का कोई चिन्ह नहीं खोज सके, जो एक–दूसरे से काफी दूर और प्रकृति में भिन्न थी। आज भी, मंगल पर जीवन मौजूद होने की संभावनाएं कम ही दिखती हैं। हालांकि, यह विश्वास करने के कारण तो अब भी हैं कि मंगल अपने इतिहास के आरंभ में, संभवतः एक घने वायुमंडल के साथ उल्लेखनीय रूप से नम रहा होगा। यदि ऐसा है तो इसकी संभावना है कि मंगल पर जीवन अस्तित्व में रहा होगा, और ग्रह की स्थितियों के खराब होने के बाद उसका अस्तित्व समाप्त हो गया। यही कारण है कि कुछ वैज्ञानिकों ने यह सुझाव दिया है कि भविष्य में मंगल पर जीवन की तलाश *वर्तमान* जीवन के बजाय *विलुप्त* जीवन पर केन्द्रित होनी चाहिए।

वाइकिंग अभियान के करीब दो दशक बाद फिर से मंगल की सतह पर गतिविधियां अचानक बढ़ गयी हैं। *मार्स फाइंडर – यूएसए लैंडर* और *धरातलीय वाहन (सरफेस रोवर)* 4 जुलाई, 1997 को मंगल पर पहुंचे, और उसके दो दिन बाद *सोजर्नर* नामक एक छह पहियों वाले वाहन के मंगल की सतह पर घूमना प्रारंभ किया। मार्स फाइंडर ने लैंडर के माध्यम से हजारों तस्वीरों के साथ–साथ चट्टानों के 15 से अधिक रासायनिक विश्लेषण तथा हवाओं एवं मौसम संबंधी अन्य कारकों से संबंधित विस्तृत आंकड़े भेजे। मंगल पर जल संबंधी इतिहास के बारे में उत्तर की खोज में, नासा ने क्रमशः 10 जून, 2003 और 7 जुलाई, 2003 को जुड़वे रोबोट भूवैज्ञानिक – *मंगल अन्वेषण वाहनों* – को मंगल की ओर प्रक्षेपित किया। *'स्पिरिट'* इसकी सतह पर 3 जनवरी, 2004 को उतरा, जबकि *'अपॉर्चुनिटी'* 24 जनवरी, 2004 को जमीन पर उतरा। स्पिरिट कुछ दिनों के लिए बीमार हो गया था, किन्तु वह पुनः स्वस्थ हो गया। स्पिरिट और अपॉर्चुनिटी बाहर निकलकर घूमेंगे, चट्टान और मिट्टी के प्रतिदर्श संग्रहित करेंगे तथा अतीत की किसी जल गतिविधि के बारे में कोई सुराग खोजने के लिए उनका विश्लेषण करेंगे और इस बात का निर्धारण करेंगे कि क्या मंगल पर जीवन कभी अस्तित्व में था। वे मंगल के मौसम और भूविज्ञान का विशिष्ट गुण बताते हुए वर्णन भी करेंगे तथा आगे आने वाले वर्षों में मानव अन्वेषण की तैयारी भी करेंगे।

मंगल अन्वेषण वाहनों के लिए एक बड़ा वैज्ञानिक सवाल यह है कि कितने समय पहले मंगल पर हुई जल–गतिविधि ने इस लाल ग्रह के वातावरण को प्रभावित किया है। इस समय जबकि मंगल की सतह पर द्रव के रूप में जल मौजूद नहीं है, मंगल पर अतीत में हुई जल गतिविधि का रिकार्ड चट्टानों, खनिजों और भूवैज्ञानिक भू–आकृतियों में पाया जा सकता है, विशेषकर उनमें जिनका निर्माण सिर्फ जल की उपस्थिति में हो सकता है। इसीलिए ये वाहन उन चट्टानों एवं मिट्टियों के विविध संग्रहों के अध्ययन के लिए उपकरणों से विशेष रूप से सुसज्जित हैं जो मंगल पर अतीत में जल गतिविधि संबंधी सुराग समाहित किये हो सकते हैं। ये अंतरिक्षयान मंगल के विपरीत हिस्सों के उन स्थलों को लक्षित कर रहे हैं जो अतीत में द्रव जल द्वारा प्रभावित हुए लगते हैं। इनके उतरने के स्थान – गुसेव क्रेटर है जो संभवतः एक विशाल संघट्टन क्रेटर में स्थित पूर्व झील थी, और दूसरा – मेरिडियनी प्लैनम हैं, जहां खनिज निपेक्ष (हेमाटाइट) यह सुझाव देंगे कि मंगल का अतीत आर्द्र था।

इसी बीच, नासा के मार्स ऑर्बिटर – 7 नवम्बर, 1996 को प्रेक्षपित *मार्स ग्लोबल सर्वेयर* और 7 अप्रैल, 2001 को प्रक्षेपित *2001 मार्स ओडिसी* – महत्वपूर्ण अवलोकन करते हुए और वाहनों को समर्थन प्रदान करते हुए मंगल की परिक्रमा बराबर कर रहे हैं। यूरोपीयन स्पेस एजेंसी द्वारा 1 जून, 2003 को प्रक्षेपित *मार्स एक्सप्रेस* – मार्स ऑर्बिटर एवं लैंडर – सिर्फ आंशिक सफलता ही प्राप्त कर पाया। इसका लैंडर *बीगल 2* अंतरिक्षयान से अलग होने के बाद कोई संकेत नहीं दे पाया। हालांकि, मार्स एक्सप्रेस अभी भी मंगल की परिक्रमा कर रहा है तथा पृथ्वी को बहुमूल्य आंकड़े सम्प्रेषित कर रहा है। वास्तव में, मंगल ने ऐसी अत्यधिक हलचल भरी गतिविधि कभी नहीं देखी होगी, जब पांच अंतरिक्षयान एक साथ उसकी परिक्रमा कर रहे हैं।

शेष पृष्ठ...9 पर जारी

सम्पादक : विनय बी. काम्बले
पत्र व्यवहार के लिए पता : **विज्ञान प्रसार** सी–24 कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली–110016
दूरभाष : 26967532, फैक्स : 26965986
ई–मेल : vigyan@hub.nic.in
वेबसाइट : http://www.vigyanprasar.com

"ड्रीम 2047" में प्रकाशित लेखों/प्रलेखों में व्यक्त लेखकों के कथनों, मतों व सुझावों के लिए विज्ञान प्रसार किसी भी रुप मे उत्तरदायी नहीं है।

"ड्रीम 2047" मे प्रकाशित लेखों के अंश, सौजन्य/साभार के साथ पुनर्प्रकाशित/उद्धृत किये जा सकते हैं।

शुक्र का पारगमन और खगोलीय इकाई

o विनय बी. काम्बले

खगोलीय इकाई

आधुनिक विज्ञान के इतिहास में परमाणु भार, प्रकाश के वेग, गुरुत्वाकर्षण स्थिरांक एवं मूल आवेशों जैसे बुनियादी स्थिरांकों की ओर हमेशा विशेष ध्यान दिया जाता रहा है। वे प्रकृति के बंद दरवाजों को खोलने वाली चाभी का काम करते हैं। दरअसल वे इस परिवर्तनशील संसार में स्थिरता के पैमाने का प्रतिनिधित्व करते हैं। हम यहां 18वीं सदी के दौरान खगोल भौतिकी के एक प्राकृतिक स्थिरांक, यानी पृथ्वी से सूर्य की माध्य दूरी, अर्थात् खगोलीय इकाई (ऐस्ट्रानॉमिकल यूनिट – ए यू) की गणना से संबद्ध कहानी संक्षेप में प्रस्तुत करेंगे। पृथ्वी के माध्य अर्ध–व्यास के रूप में व्यक्त की जाने वाली यह खगोलीय इकाई, ब्रह्मांड को मापने का मानक मानदंड या पैमाना बन गई है। केप्लर के ग्रहीय गतियों से संबंधित नियम और न्यूटन के बल संबंधी नियम गतिशील आयामों पर विचार करते हैं, जोजिस प्रणाली के लिए स्थापित किए गए हैं, उसके वास्तविक आयामों से निरपेक्ष हैं। परिणामस्वरूप उनकी सहायता से एक ग्रह से दूसरे ग्रह की सापेक्षिक दूरी को जानना तो संभव है पर इनके माध्यम से उनकी बिल्कुल सटीक दूरी को मापना संभव नहीं होता। सूर्य और पृथ्वी की दूरी के संदर्भ में केप्लर के नियम में कुछ मानों का इच्छानुसार उपयोग करके सौर मंडल के अन्य सदस्यों की सापेक्षिक स्थिति का आकलन तो किया जा सकता है, पर यह मीटर की वास्तविक लंबाई जाने बिना ही नई दिल्ली से चेन्नई की दूरी की गणना करने जैसा होगा! इसलिए 17वीं सदी के वैज्ञानिकों में सौर मंडल के वास्तविक विस्तार के मापन से संबंधित समस्या को हल करने के लिए अधिकतम गुरुत्व दिया गया।

जोहानस केपलर

स्वर्णिम अवसर

18वीं सदी के खगोल वैज्ञानिकों को अपनी इच्छा पूरी करने का स्वर्णिम अवसर मिल ही गया। सन् 1761 और सन् 1769 में शुक्र के पारगमन से उन्हें ऐसी क्रियाविधि उपलब्ध हो गई, जिसकी सहायता से वे सूर्य की दूरी का इतना सटीक मापन कर सके, कि 19वीं सदी के मध्य तक सूर्य की दूरी का उससे अधिक सटीक मापन नहीं किया जा सका। वस्तुतः सूर्य के समक्ष कदाचित् ही होने वाले शुक्र के पारगमन का 17वीं सदी तक अवलोकन ही नहीं किया जा सका था। तथ्य यह है कि खगोल विज्ञान के इतिहास में ऐसी केवल पांच घटनाओं को प्रेक्षित किया जा सका। ये सन् 1639, सन् 1761, सन् 1769, सन् 1874 और सन् 1882। सन् 1631 के पारगमन का प्रेक्षण नहीं किया जा सका था। ये घटनाएं 243 सालों के एक नियमित कालचक्र में घटित होती हैं। इनके बीच–बीच में चार अनियमित प्रकृति के अंतराल उपस्थित होते हैं, जो क्रमशः लघु और दीर्घ होते हैं। लघु अंतराल आठ वर्ष का होता है, जबकि दीर्घ अंतराल क्रमशः 121½ और 105½ वर्ष का होता है। जब पारगमन की परिघटना आठ सालों में घटित होती है, तो इसका कारण यह होता है कि पृथ्वी द्वारा की जाने वाली सूर्य की सात परिक्रमाओं की अवधि शुक्र द्वारा की जाने वाली सूर्य की 13 परिक्रमाओं की अवधि के बराबर होती है।

एडमंड हैली

18वीं सदी के पारगमन की घटना ऐसे समय में घटित हुई, जब गणित और खगोल विज्ञान का अत्यंत लाभदायक सम्मिलन हो रहा था। उस दौर को तर्क और ज्ञानोदय का काल भी कहा जाता है। उसी दौर में वैज्ञानिक गतिविधियों और बौद्धिकतापूर्ण रुचियों के विकास के कारण आधुनिक इतिहास के अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सहयोग वाले वैज्ञानिक अभियानों की भी शुरुआत हुई। इस लेख में हम शुक्र के पारगमन के वैज्ञानिक आयामों और पृथ्वी से सूर्य की दूरी मापने में इसके प्रयोग की विधि के बारे में संक्षिप्त चर्चा करेंगे।

पारगमन क्या है?

जब चंद्रमा, पृथ्वी और सूर्य के बीच में आ जाता है तो इसे सूर्यग्रहण कहते हैं। लेकिन जब अंदरूनी ग्रह जैसे कि बुध, या शुक्र में से कोई भी ग्रह सूर्य और पृथ्वी के बीच आ जाता है तो उसे पारगमन कहते हैं। अब से कुछ ही महीनों बाद हमें शुक्र को सूर्य की चकती के समक्ष से गुजरते हुए देखने का सुअवसर प्राप्त होगा। पृथ्वी से बुध या शुक्र की चकती चंद्रमा की तुलना में काफी छोटी दिखाई देती हैं। इसलिए जब वे सूर्य के समक्ष से गुजरते हैं तो केवल एक छोटे से काले धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। हर पारगमन में यह धब्बा सूर्य के समक्ष से एक भिन्न मार्ग से गुजर सकता है। उसके मार्ग का निर्धारण पारगमन से संबंधित ज्यामिति से निर्धारित होता है। पारगमन की यह घटना बहुधा इसलिए नहीं घटित होती कि बुध और शुक्र के परिक्रमापथ क्रांतिवृत्त पर (सूर्य के इर्द–गिर्द निर्मित पृथ्वी का औसत परिक्रमा कक्ष – ग्रह हमेशा इससे समीप दिखते हैं) एक छोटा सा कोण निर्मित करते हुए झुके हुए हैं। इसलिए आम तौर पर वे या तो क्रांतिवृत्त से ऊपर (उत्तर) या नीचे (दक्षिण) रहते हैं। यही कारण है कि हमें हर अमावस्या को सूर्यग्रहण और हर पूर्णिमा को चन्द्रग्रहण नहीं दिखाई देते हैं। चन्द्रमा बहुधा क्रांतिवृत्त से कुछ ऊपर या कुछ नीचे रहता है। इसी तरह बुध या शुक्र के पारगमन की घटना तब घटित होती है, जब ग्रह द्वारा क्रांतिवृत्त को पार करने की तिथि के एक–दो दिनों के अंदर ही उनकी अंतर्युति घटित होती है (यानी सूर्य, ग्रह और पृथ्वी एक ही सीध में आ जाते हैं और ग्रह सूर्य तथा पृथ्वी के बीच में स्थित होता है)। एक सदी में बुध का पारगमन 13–14 बार दिखाई देता है। प्रसंगवश बताना उचित रहेगा कि 21 वीं सदी में बुध की पहली युति 7 मई, 2003 को घटित हुई और वह पूरे देश में दिखाई दी थी। लेकिन सूर्य की चकती के समक्ष से गुजरते समय शुक्र का पारगमन, ग्रहीय पंक्तिबंधन की एक अति विरल परिघटना है। दूरदर्शी के आविष्कार के बाद ऐसी केवल छह घटनाएं (सन् 1631, 1639, 1761, 1769, 1874 और 1882) घटित हुई हैं। मजेदार तथ्य यह है कि इस समय ऐसा कोई व्यक्ति जीवित नहीं है, जिसने शुक्र का पारगमन देखा हो, क्योंकि उसका पिछला पारगमन दिसंबर 1882 में घटित हुआ था। शुक्र की अगली दो युतियां अर्थात् पारगमन 8 जून 2004 और 6 जून, 2012 को घटित होंगी। 8 जून, 2004 को घटित होने वाली युति को यूरोप, अफ्रीका (पश्चिमी भाग को छोड़कर), मध्य पूर्व एवं एशिया (पूर्वी हिस्से को छोड़कर) से देखा जा सकेगा। युति की संपूर्ण परिघटना के प्रेक्षण के लिए भारत अत्यधिक उपयुक्त स्थान है। हम वास्तव में सौभाग्यशाली हैं।

हैली द्वारा पारगमन के महत्व की व्याख्या

पारगमन का महत्व क्या है? एडमंड हैली (सन् 1656–1742) ने अनुभव किया कि पारगमन की घटना का उपयोग पृथ्वी से सूर्य की दूरी मापने के लिए किया जा सकता है (इस संबंध में बाद में चर्चा की गई है)। हम पहले उल्लेख कर

चुके हैं कि केप्लर के नियम की सहायता से ग्रहों की सापेक्षिक दूरी तो जानी जा सकती थी पर उससे उनकी बिल्कुल सटीक दूरी का ज्ञान असंभव था। हैली को अपने जीवन में शुक्र के पारगमन को देखने का अवसर नहीं मिल सका, पर उसके प्रयत्न सन् 1761 और सन् 1769 में शुक्र के पारगमन के प्रेक्षण के अनेक अभियानों के आधार बने और उससे खगोल विज्ञानी सूर्य की दूरी का पहली बार बेहतर ढंग से आकलन कर सके। पृथ्वी के विभिन्न स्थानों से परिघटना के घटित होने के समय का मापन और ज्यामिति का प्रयोग करके पृथ्वी से सूर्य की दूरी का मापन करने में सफलता मिली। आज तो अपेक्षाकृत अधिक परिष्कृत विधियां उपलब्ध हैं, पर 18वीं और 19वीं सदी में सावधानी से किए गए प्रेक्षणों से पृथ्वी से सूर्य की जो दूरी ज्ञात की गई उसमें और आज स्वीकार्य दूरी में 1 प्रतिशत से भी कम का अंतर है!

ठोलेमी

खगोलीय विश्व का वास्तविक मापदंड – इतिहास पर एक दृष्टि

खगोलीय विश्व के वास्तविक मापदंड के निर्धारण का अपना अलग ही इतिहास है। पृथ्वी से सूर्य की दूरी का निर्धारण सबसे पहले एनैक्सिमैंडर ने ईसा के पूर्व 6ठीं शताब्दी में किया था। उसने सूर्य के साथ ही चन्द्रमा की दूरी का भी निर्धारण किया। उसने पृथ्वी से सूर्य की दूरी पृथ्वी का व्यास की 27 गुना और चंद्रमा की दूरी पृथ्वी के व्यास की 19 गुना निर्धारित की। स्पष्टतः इन गणनाओं का कोई ज्यामितीय आधार नहीं था। संभवतः उसके इन निष्कर्षों का आधार किसी प्रकार की रहस्यपूर्ण संख्यात्मकता थी। कहा जाता है कि यूनान के यूडोक्सस (408 ई.पू. – 355 ई.पू.) ने भी इस संबंध में गणना की थी। उसने पृथ्वी से सूर्य और चन्द्रमा की सापेक्षिक दूरी का अनुपात 9 : 1 निर्धारित किया। ई.पू. चौथी सदी के मध्य से ग्रहों के आकार और उनकी दूरी के बारे में अनेक अध्ययन किए गए। सैमोस निवासी ऐरिस्टैर्कस (ई.पू. 310–230) ने पृथ्वी से सूर्य और चन्द्रमा की दूरी की जो गणना की, उसके अनुसार, पृथ्वी से सूर्य की दूरी उससे चंद्रमा की दूरी की तुलना में 18 से 20 गुना अधिक है। वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि पृथ्वी से सूर्य की दूरी पृथ्वी के औसत व्यास से 180 गुना अधिक या लगभग 22 लाख किमी. है। वर्तमान आकलन की तुलना में यह दूरी काफी कम है। वास्तविकता से सर्वाधिक करीब और आधुनिक काल से पहले किए गए आकलनों में से सर्वाधिक साहसिक आकलन पोसिडोनियस (135 ई.पू.–51 ई.पू.) ने किया। उसने पृथ्वी से सूर्य की दूरी पृथ्वी के व्यास की तुलना में 6545 गुना अधिक यानी 8 करोड़ 30 लाख किमी. आंकी। हिप्पार्कस ने पृथ्वी से सूर्य की दूरी पृथ्वी के व्यास की तुलना में 1245 गुना आंकी। टोलेमी ने पृथ्वी से सूर्य की दूरी पृथ्वी के व्यास से 605 गुना निर्धारित की।

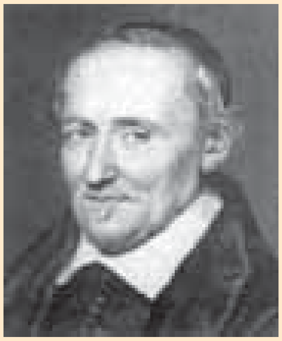
पियरे गसेन्दी

यहां पर लंबन अर्थात् ''पैरेलेक्स'' की अवधारणा के अस्तित्व में आने का उल्लेख करना आवश्यक है। ऐसा प्रतीत होता है कि खगोलविज्ञानियों में (कम से कम सौर पैरेलेक्स के संबंध में) पैरेलेक्स की अवधारणा आर्किमिडीज (287 ई.पू. –212 ई.पू.) के कारण अस्तित्व में आई। सौर पैरेलेक्स को सामान्यतः सूर्य से पृथ्वी को देखने पर (उसके व्यास या त्रिज्या के संदर्भ में) निर्मित होने वाले कोणीय आकार के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है (चित्र 1)। हम इस बारे में कुछ बाद में चर्चा करेंगे।

टोलेमी (दूसरी शताब्दी) ने सौर पैरेलेक्स की गणना की और इसे चाप के तीन मिनट के कोणीय मापन के रूप में अभिव्यक्त किया। सौर पैरेलेक्स के इस मान को टाइको ब्राहे (सन् 1546–1601) के समय तक स्वीकार किया जाता रहा। यहां तक कि निकोलस कोपर्निकस ने भी जो गणना की उसमें और टोलेमी द्वारा की गई गणना में मामूली सा ही अंतर था। उसने गणना की कि पृथ्वी से सूर्य की दूरी पृथ्वी के व्यास की 750 गुना है। टाइको ब्राहे ने तो सूर्य की दूरी की पुनर्गणना करने का कोई प्रयास नहीं किया पर उसके जीवन के अंतिम वर्षों में उसके साथ सहकर्मी के रूप में काम करने वाले जोहानीस केप्लर (सन् 1571–1630) ने इस समस्या का पुनर्परीक्षण करने का निश्चय किया। केप्लर ने निष्कर्ष निकाला कि टोलेमी ने सौर पैरेलेक्स को काफी अधिक आंका है, और यह एक मिनट से अधिक नहीं हो सकता – बल्कि यह इस ऊपरी सीमा से काफी कम ही हो सकता है। सन् 1627 में केप्लर ने अपनी रुडोल्फिन तालिका (बाक्स 1) तैयार कर ली। इस तालिका की सहायता से वह बुध और शुक्र की गति के बारे में अत्यंत सटीक भविष्यवाणी कर पाने में सक्षम हो गया। उसने अनुभव किया कि सौर मंडल इन आंतरिक ग्रहों की गतियों का सटीक ज्ञान होने से यह निश्चय करना संभव हो सकेगा कि उन्हें सूर्य के समक्ष से गुजरते हुए पृथ्वी से कब देखा जा सकेगा यानी उनका पारगमन कब होगा। दो साल बाद उसने एक पर्चा प्रकाशित किया जिसमें 7 नवंबर 1631 को बुध और 6 दिसम्बर 1631 को शुक्र के पारगमन की भविष्यवाणी की गई थी पर उसमें शुक्र के पारगमन की घटना का पृथ्वी से सूर्य की दूरी नापने के साथ कोई संबंध नहीं जोड़ा गया था।

टायको ब्राहे

सन् 1631 में पिएरे गैसेंडी (1592–1655) ने बुध के पारगमन का पेरिस में प्रेक्षण किया। इस प्रकार वह कसी ग्रह का पारगमन देख सकने वाला पहला मनुष्य बन गया। इस कार्य के लिए उसने ''कैमरा आब्सक्युरा'' के सिद्धांत का उपयोग कियका। हम यहां उसके द्वारा अपनाई गई विधि का संक्षेप में उल्लेख कर रहे हैं। उसने एक अंधकारयुक्त कमरे में खिड़की में बने एक छेद के जरिए प्रकाश आने दिया। उसके बाद एक श्वेत स्क्रीन पर सूर्य का बिंब बनने दिया गया जिसके बाहरी किनारों का बिलकुल सटीक रेखांकन कर दिया गया। उस वृत्त को चार समान भागों में विभाजित करने के लिए अक्ष निर्मित किए गए, और फिर उस वृत्त को 360 भागों में विभाजित कर दिया गया। प्रेक्षण का समय ज्ञात करने के लिए गैसेंडी ने अपने ऊपर स्थित कमरे में एक सहायक को तैनात किया जिसका काम गैसेंडी द्वारा पांव पटक कर संकेत किए जाने पर दो फुट के वृत्तपाद (क्वाड्रैंट) से सूर्य की ऊंचाई को अवलोकन करना था। इस तरह जब पारगमन की घटना घटित हुई तो गैसेंडी ने स्क्रीन पर उभरने वाले बुध के बिंब की गति से संगत जीवा खींच कर उसके सूर्य के सामने से होकर गुजरने के मार्ग का पता लगा लिया। इसके अलावा वह उसके आभासित व्यास (लगभग 20 सेकेंड चापवृत्त काक कोण) का आकलन करके पारगमन के समय को निर्धारित करने में भी सफल हुआ। हर दृष्टि से वह एक सफल वैज्ञानिक अवलोकन था। गैसेंडी ने बुध के पारगमन के प्रेक्षण में मिली सफलता को शुक्र के पारगमन के बारे में दोहराने का प्रयास किया पर रुडोल्फिन तालिका की एक गलती के कारण वह ऐसा नहीं कर सका। 6/7 दिसम्बर, 1931 की यूरोपीय ''रात्रि'' में शुक्र, सूर्य की चकती के समक्ष से गुजरा, अतः उस पारगमन का कोई प्रेक्षण नहीं किया जा सका।

रुडोल्फिन तालिका में भविष्यवाणी की गई थी कि सन् 1631 के उस पारगमन के बाद शुक्र का अगला पारगमन सन् 1761 में घटित होगा। सन् 1639 में वह दक्षिण में इतनी दूर स्थित होगा कि उसका सूर्य के समक्ष से गुजर पाना संभव नहीं होगा। जेरेमी होरोक्स (सन् 1619–1641) ने तालिका की गलतियों का अध्ययन करने के दौरान यह निष्कर्ष निकाला कि शुक्र का पारगमन सन् 1639 में निश्चित रूप से होगा। इससे होरोक्स को उस पारगमन का काफी

बाक्स 1
रुडोल्फीन तालिका

ग्रहीय गति से संबंधित रुडोल्फीन तालिका को केप्लर ने सन् 1627 में प्रकाशित किया था और इसे टाइको ब्राहे और केप्लर के दिवंगत संरक्षक रुडोल्फ दूसरे को समर्पित किया गया। केप्लर द्वारा ग्रहीय गतियों के बारे में नवस्थापित नियमों का रुडोल्फीन तालिका में पहली बार उपयोग किा गया था और उसके साथ ही टाइको द्वारा किए गए सटीक प्रेक्षणों का अंशशोधित उपयोग किया था। इस तालिका को उस समय व्यापक स्तर पर मान्यता प्राप्त हुई, जब केप्लर द्वारा की गई भविष्यवाणी के मुताबिक ही फ्रांसीसी दार्शनिक और खगोल विज्ञानी पिएरे गैसेंडी (सन् 1592–1655) ने सौर चकती का पारगमन करते समय बुध ग्रह का प्रेक्षण किया। इस सफलता से न केवल रुडोल्फीन तालिका को व्यापक स्तर पर मान्यता प्राप्त होने का मार्ग प्रशस्त हुआ बल्कि ग्रहीय गतियों से संबंधित केप्लर के तीनों नियमों को भी स्वीकृति मिली। रुडोल्फीन तालिका ने सन् 1631 के शुक्र के पारगमन की भविष्यवाणी तो की थी पर वह 1639 के पारगमन की भविष्यवाणी नहीं कर सकी। इस तालिका की भविष्यवाणी अनुसार 1639 में शुक्र दक्षिण में इतनी दूर स्थित होगा कि सौर चकती के सामने से नहीं गुजर सकेगा।

बाक्स 2
मैं बार–बार संस्तुति करता हूं

''मैंने अत्यधिक सावधानी के साथ सौर चकती के समक्ष से गुजरते हुए बुध का प्रेक्षण किया, बुध जब सूर्य कोरों के सामने से गुजर कर उसके आंतरिक भाग को स्पर्श करता प्रतीत हुआ..... और उसने आंतरिक संपर्क–कोण निर्मित किया तभी मैंने 24 फुट के एक दूरदर्शी की सहायता से उस क्षण का आशा के विपरीत अत्यंत सटीक प्रेक्षण किया। इस प्रकार मैंने..... बुध के ..... समय का अत्यंत सटीक मापन किया, जिसमें एक सेकंड की भी त्रुटि नहीं थी। ....प्रेक्षण के आधार पर मैं तत्काल इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि ऐसे प्रेक्षणों की सहायता से सौर पैरेलेक्स की गणना की जा सकती है...... अतः मैं यह संस्तुति बार–बार कर रहा हूं कि उत्सुक लोग इस प्रेक्षण में निरंतर संलग्न रहें।''

एडमंड हैली (सन् 1691)

पारगमन के बारे में एडमंड हैली का कथन

''सूर्य की चकती के समक्ष से शुक्र के पारगमन का प्रश्न बिना सुलझाया रहता है। सूर्य की तुलना में उसके पैरेलेक्स के चार गुना अधिक होने के कारण वह जब हमारी पृथ्वी के विभिन्न भागों में सौर चकती के समक्ष से गुजरता दिखाई देगा तो उस अवधि में अत्यंत बोध गम्य परिवर्तन घटित होंगे। इन परिवर्तनों को उचित ढंग से अवलोकित करके सूर्य के पैरेलेक्स को समय के एक सेकंड के अल्पांश तक मापा जा सकता है और इसके लिए सामान्य दूरदर्शी एवं साधारण सी घड़ी के अलावा अन्य किसी उपकरण की आवश्यकता नहीं होगी। इसके लिए अवलोकनकार में निष्ठा और परिश्रमशीलता के अलावा किसी अन्य योग्यता की आवश्यकता नहीं है। हां, उसे खगोलशास्त्र में थोड़ा पारंगत होना चाहिए। क्योंकि हमें प्रेक्षण स्थल के अक्षांश मापने और ध्रुववृत्त से उस स्थान के समय का अंतर मापने में लापरवाही नहीं बरतनी चाहिए। बस इतना ही पर्याप्त है। यदि शुक्र के सूर्य चकती में पूर्ण प्रवेश से लेकर उसके चकती से निर्गमन तक यानी जब उसका अपारदर्शी भाग सूर्य के चमकीले कोरों को स्पर्श करने लगे, समय का मापन आकाशीय पिंडों के परिभ्रमण के अनुरूप ही बिल्कुल सटीक ढंग से किया जाय तो मेरा अनुभव है कि उसे समय के एक सेकंड के अंश तक अवलोकित किया जा सकता है।''

एडमंड हैली (सन् 1716)

सावधानी से प्रेक्षण करने की प्रेरणा मिली। उसने आठ साल पहले गैसेंडी द्वारा बुध के पारगमन के प्रेक्षण के लिए अपनाई गई क्रिया विधि को ही अपनाया पर उसमें इतना परिवर्तन कर दिया कि अंधेरे कमरे में प्रकाश उपस्थित छिद्र से प्रवेश कराने के बजाय उसने प्रकाश के प्रवेश मार्ग में एक दूरदर्शी का उपयोग किया। इस तरह वह स्क्रीन पर ग्रह का अधिक तीव्र फोकस वाला बिंब उभार पाने में सफल रहा। उसका अवलोकन पूरी तरह सफल रहा। इन प्रेक्षणों के जरिए होरोक्स ग्रहीय गति के सिद्धांत से संबंधित अनेक तथ्यों को एकत्र कर सका और अब वह इस बात को पूरे आत्मविश्वास से कह सकता था कि शुक्र का व्यास एक मिनट से अधिक नहीं हो सकता। हालांकि वह सौर पैरोलेक्स की सटीक गणना नहीं कर सका, पर इस संबंध में उसका आकलन था कि यह चाप के 14 सेकंड भाग से अधिक नहीं होना

जेरेमिया होरोक्स

चाहिए। केप्लर ने सौर पैरोलेक्स के एक मिनट होने का जो आकलन किया था उसे देखते हुए होरोक्स के निष्कर्ष को काफी साहसिक माना जा सकता है। 18वीं सदी में शुक्र के पारगमन के प्रेक्षणों से प्राप्त परिणाम केप्लर की तुलना में होरोक्स को सत्य के अधिक करीब दर्शाते हैं। न्यूटन ने उसकी काफी प्रशंसा की। शुक्र के पारगमन और चंद्रमा की कक्षा के बारे में किए गए कार्य के अतिरिक्त उसने शनि और बृहस्पति की माध्य गति में पाई जाने वाली असमानता के कारण जानने का प्रयास किया। उसने धूमकेतुओं की प्रकृति और गति के बारे में एक लेख लिखा तथा ज्वार आने की प्रक्रिया का अध्ययन किया, हालांकि वह अध्ययन अपूर्ण रहा। 22 साल के एक व्यक्ति के लिए उपलब्धियों की यह सूची काफी प्रभावशाली है पर अपने जीवनकाल में वह अल्पित और अचर्चित रहा।

पृथ्वी से सूर्य की दूरी की वैज्ञानिक गणना – शुक्र के पारगमन का प्रेक्षण किये बिना पहली बार होरोक्स द्वारा किए गए कार्य के बीस साल बाद की गई। गिओवानी डोमिनिको कैसिनी (सन् 1625–1712) ने जीन रीचर के साथ मिलकर कैयेने में तारों की पृष्ठभूमि में मंगल के पैरोलेक्स की गणना की। प्रेक्षण के दौरान मंगल ग्रह पृष्ठभूमि से विपरीत दिशा में स्थित था। इस प्रेक्षणों से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर कैसिनी ने जो गणना की उसके अनुसार सौर पैरोलेक्स का मान 9.5 सेकंड निकला। उसके अनुसार पृथ्वी से सूर्य की दूरी 13 करोड़ 90 लाख किमी. निर्धारित की गई। अन्य अवलोकनकारों ने अपने–अपने आकलनों के अनुसार, 10 से 20 सेकंड के दायरे में सौर दिग्भेद के अलग–अलग मान निर्धारित किए।

सिद्धांततः सौर मंडल के विस्तार का निर्धारण बुध और शुक्र इन दोनों ग्रहों के पारगमन का प्रेक्षण करके किया जा सकता है। लेकिन इस काम को व्यावहारिक रूप तभी दिया जा सका, जब एडमंड हैली ने इस दिशा में प्रयास किया। सौर पैरोलेक्स की गणना के लिए शुक्र के पारगमन का उपयोग करने में हैली की रुचि तब जागृत हुई, जब उसने दक्षिणी ध्रुव से दिखाई देने वाले तारों और सन् 1677 में होने वाले बुध के पारगमन का प्रेक्षण करने के लिए सन् 1677 में सेंट हेलेना की यात्रा की (बाक्स 2)। सन् 1691 में उसने यह घोषणा की कि शुक्र के पारगमन का प्रेक्षण करके पृथ्वी से सूर्य की दूरी ज्ञात की जा सकती है। उसने इसका सटीक मान ज्ञात करने के लिए एक योजना भी प्रस्तुत कीं उसने सन् 1716 में एक लेख प्रकाशित किया जिसमें परिणाम निश्चित रूप से प्राप्त करने के साथ पारगमन के अवलोकन की एक व्यावहारिक रूपरेखा प्रस्तुत की गई थी। (बाक्स 2)। एक खगोल विज्ञानी के रूप में उसकी ख्याति ने पूरे विश्व के वैज्ञानिकों को सन् 1761 और 1769 में होने वाले पारगमन द्वारा उपलब्ध कराए जाने वाले दुर्लभ अवसर के उपयोग की तैयारी करने के लिए प्रेरित किया।

केसिनी

सौर पैरोलेक्स

खगोलविज्ञान में सूर्य की दूरी के संबंध में की जाने वाली चर्चा में सौर पैरोलेक्स नामक एक अत्यंत उपयुक्त शब्द का प्रयोग किया जाता है। पैरोलेक्स का आशय सामान्यतः खगोलीय पिंड की किसी अवलोकनकार द्वारा अवलोकित

दिशा और किसी मानक संदर्भ बिन्दु से प्रेक्षित की गई उसकी दिशा के अंतर से होता है। यदि पृथ्वी के केन्द्र को मानक संदर्भ बिन्दु मान लिया जाय और अवलोकनकार की स्थिति पृथ्वी की परिधि पर मानी जाय ता किसी पिंड के पैरोलेक्स को पृथ्वी के केन्द्र एवं पिंड से दिखाई देने वाली पृथ्वी की परिधि के बीच के कोणीय पार्थक्स के रूप में भी व्याख्यायित किया जा सकता है। इस प्रकार सौर पैरोलेक्स सूर्य से पृथ्वी के केन्द्र तक और उसकी सतह पर स्थित पैरोलेक्स के उपस्थित स्थल तक खींची गई रेखाओं के बीच निर्मित कोण को कहते हैं। सूर्य जब क्षितिज पर हो तो एक विशेष प्रकार के पैरोलेक्स को व्याख्यायित करना उपयोगी होता है। यह क्षैतिज पैरोलेक्स सूर्य से दिखने वाली पृथ्वी की त्रिज्या ही होता है। वस्तुतः सौर पैरोलेक्स पृथ्वी की त्रिज्या द्वारा सूर्य के केन्द्र पर निर्मित कोणीय अंतर ही है। यदि यह कोण ज्ञात हो जाय तथा पृथ्वी की त्रिज्या को नापा जा सके तो सूर्य की दूरी को सामान्य गणना करके जाना जा सकता है (चित्र 1)।

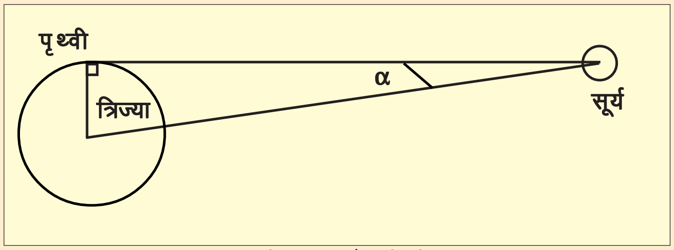

चित्र 1 : सौर दिग्भेद

सौर पैरोलेक्स और सूर्य की दूरी के बीच कया संबंध है? मान लीजिए कोई अवलोकनकार सूर्य पर उपस्थित है और उसके पास ऐसा उपकरण है जिसकी सहायता से वह दोनों बिंदुओं के बीच के कोणीय पार्थक्य को नाप सकता है। इसके अलावा उसे पृथ्वी का व्यास भी ज्ञात है। उस स्थिति में सूर्य से दिखने वाले पृथ्वी के व्यास द्वारा निर्मित कोण को माप और व्यास की वास्तविक लंबाई ज्ञात होने के कारण सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी निर्धारित करने की समस्या एक समद्विबाहु त्रिभुज की ऊंचाई ज्ञात करने की एक सामान्य त्रिकोणमितीय समस्या मात्र बन कर रह जाएगी जिसमें आधार की लंबाई और दोनों समबाहुओं के बीच निर्मित कोण ज्ञात है। इसके ठीक विपरीत पृथ्वी पर उपस्थित पैरोलेक्स के लिए यह समस्या दिग्भेद के कोण को मापने की समस्या के रूप में उपस्थित होगी।

सौर पैरोलेक्स का मापन

आइए, अब इस पहलू पर गौर करें कि शुक्र के पारगमन का उपयोग सूर्य की दूरी निर्धारित करने के लिए कैसे किया जाता है। जब कोई प्रेक्षक किसी ऐसी दूरी को, मान लीजिए किसी नदी की चौड़ाई को नापना चाहता है तो वह अपनी तरफ के नदी के किनारे की एक आधार रेखा को नापता है और इसके साथ ही इस आधार रेखा और इच्छित बिंदु के साथ जुड़ने वाली रेखाओं के बीच के कोण को मापता है। इन आंकड़ों की सहायता से वह वांछित दूरी की गणना आसानी से कर सकता है।

चन्द्रमा की दूरी मापने के लिए भी खगोलविज्ञानी एक ऐसी ही योजना का सहारा लेते हैं। अपनी गणना के लिए वे पृथ्वी की त्रिज्या को आधार मानते हैं, तथा त्रिज्या द्वारा चंद्रमा के केन्द्र पर निर्मित कोणीय पार्थक्य को पैरोलेक्स कहा जाता है। इन दोनों का ज्ञान हो जाने के बाद पृथ्वी से चंद्रमा की दूरी आसानी से ज्ञात की जा सकती है। लेकिन सूर्य जितनी दूरी पर स्थित किसी पिंड के लिए यह तरीका पूरी तरह असफल सिद्ध होता है। इसका कारण यह है कि सूर्य की दूरी अत्यधिक होने की वजह से पृथ्वी की त्रिज्या द्वारा उस पर निर्मित कोणीय पार्थक्य बोधगम्य नहीं रह जाता। हैली का तरीका खगोलविज्ञानियों को सूर्य के बजाय शुक्र के निकटतम बिंदु पर स्थित होने की स्थिति में उसके पैरोलेक्स का उपयोग करने में सहायक सिद्ध होता है। शुक्र एक ऐसी कक्षा में परिक्रमा करता है, जो पृथ्वी की परिक्रमा–कक्षा के अंदर स्थित है। वह अपनी परिक्रमा 224 दिनों में पूरी कर लेता है, जबकि पृथ्वी को अपनी परिक्रमा पूरी करने में 365 दिन लगते हैं। चित्र 2 में *E* पृथ्वी और उसकी कक्षा का, *V* शुक्र और उसकी कक्षा का, *S* सूर्य का, और AB पृथ्वी और शुक्र की कक्षाओं द्वारा निर्मित पात रेखा (लाइन ऑफ नोड्स) का प्रतिनिधित्व करते हैं। शुक्र का कक्ष लगभग 3 डिग्री और 23½ मिनट झुका हुआ है इसलिए अंतर्युत्ति (यानी सूर्य, शुक्र और पृथ्वी एक ही सीध में आ जाएं, तथा शुक्र सूर्य और पृथ्वी के बीच हो) की अवस्था बिरले ही आती है। यह तभी संभव हो सकता है जब पृथ्वी और शुक्र दोनों पात रेखा *AB* पर सूर्य के एक ही तरफ स्थित हों। प्रसंगवश इस तथ्य का उल्लेख करना उचित होगा कि पृथ्वी जून में हमेशा *A* स्थित में और दिसम्बर में *B* स्थिति पर होती है। अतः पारगमन की समस्त प्रेक्षणीय परिघटनाएं जून और दिसम्बर के महीने में ही घटित होंगी। पात रेखा (लाइन ऑफ नोड्स) पर शुक्र जब सूर्य की विपरीत दिशा में स्थित होता है, तो उसे बाह्ययुति कहते हैं। 534 दिनों के अंतराल में दो क्रमिक युतियां (अंतर्युति या बाह्ययुति) घटित होती हैं। शुक्र जब अंतर्युति की अवस्था में होता है तो वह सूर्य की तुलना में पृथ्वी से कम दूरी पर स्थित होता है, अतः उसका पैरोलेक्स अपेक्षाकृत अधिक होता है। वस्तुतः उस अवस्था में वह पृथ्वी से सूर्य की दूरी की तुलना में महज चौथाई दूरी पर स्थित होता है, अतः उसका पैरोलेक्स सूर्य की अपेक्षा चार गुना अधिक होता है। हैली की पद्धति के जरिए इस अपेक्षाकृत विशाल पैरोलेक्स का ही लाभ उठाया जाता है। एक मात्र कठिनाई यही होती है कि शुक्र अपनी अंतर्युति की अवस्था में बिरले ही दिखाई देता है। सूर्य का प्रकाश इतना तीव्र होता है कि इसके समीप्य में स्थित तारे दृष्टि से विलुप्त हो जाते हैं। ऐसे अवसर कदाचित् ही आते हैं, जब शुक्र पात रेखा पर इतनी सटीक स्थिति में होता है कि उसकी चकती सूर्य की चकती पर एक काले बिंदु के रूप में प्रक्षिप्त होती है और उसका सटीक अवलोकन कर पाना संभव होता है।

यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि हम सौर पैरोलेक्स को मापने के लिए बुध के पारगमन का उपयोग क्यों नहीं कर सकते जबकि वह साल में 13–14 बार घटित होता है। सैद्धांतिक दृष्टि से ऐसा किया जा सकता है, पर बुध सूर्य के अत्यधिक करीब और पृथ्वी से अत्यधिक दूर है, अतः उसका पैरोलेक्स शुक्र के पैरोलेक्स से काफी कम होता है। अतः उसको मापना अपेक्षाकृत अधिक कठिन होता है।

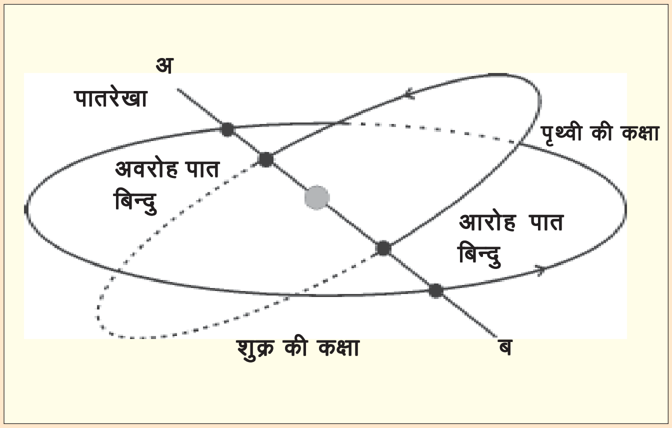

चित्र 2 : पारगमन की ज्यामिति

अब हम शुक्र के पारगमन की परिघटना का उपयोग करके सौर पैरोलेक्स को मापने की विधि का वर्णन करेंगे। चित्र 3 में *A* और *B* पृथ्वी पर उपस्थित दो अवलोकनकार, *V* अपनी कक्षा में उपस्थित शुक्र ग्रह, *CD* एवं *RG* क्रमशः *A* और *B* प्रेक्षकों द्वारा सूर्य की चकती के समक्ष से शुक्र के पारगमन के प्रेक्षित मार्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। केप्लर के ग्रहीय गतियों से संबंधित तीसरे नियम की सहायता से हम सूर्य के संदर्भ में पृथ्वी और शुक्र की सापेक्षिक स्थिति निर्धारित कर सकते हैं। अब मान लीजिए कि शुक्र ग्रह अपनी कक्षा *V* में सूर्य और पृथ्वी के बीच परिभ्रमण कर रहा है। अब हम कल्पना करते हैं कि पृथ्वी स्थिर है और शुक्र के परिभ्रमण का वेग उसके स्वयं के और पृथ्वी के वेग अंतर के बराबर है। दोनों अवलोकनकार पारगमन की घटना को घटित होता हुआ देख रहे हैं। प्रेक्षक *A*

उत्तरी ध्रुव के पास स्थित किसी बिंदु और प्रेक्षक *B* दक्षिणी ध्रुव के पास स्थित किसी बिन्दु पर उपस्थित है। स्पष्ट है कि इन दोनों प्रेक्षकों को पारगमन की घटना अलग–अलग रेखाओं पर घटित होती दिखाई देगी। इस प्रकार प्रेक्षक *A* ग्रह को *CD* रेखा पर और प्रेक्षक *B* उसे *FG* रेखा पर पारगमन करते हुए देखेगा। *A* और *B* की स्थितियों में जितना अधिक अंतर होगा दोनों मार्गों के बीच का अंतराल *'ab'* भी उसी अनुपात में अधिक होगा। केप्लर के ग्रहीय गतियों संबंधी नियमों की सहायता से हम जान सकते हैं कि *V* से *A* की तुलना में *a* कितनी अधिक दूरी पर है। चूंकि हमें *A* और *B* स्थितियों पर दोनों प्रेक्षकों की स्थिति ज्ञात है अतः उनके बीच की दूरी को किमी. में ज्ञात करने के बाद प्राथमिक ज्यामिति का उपयोग करके उनके बीच की दूरी की गणना तत्काल ही किमी. में की जा सकती है। अब केवल यह ज्ञात करना शेष रह जाता है कि 'ab' और सूर्य के संपूर्ण व्यास में क्या अनुपात है और तब हम सूर्य

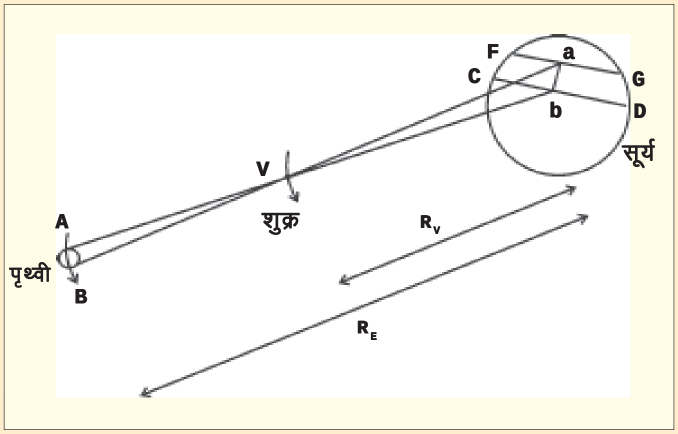

चित्र 3 : सौर पैरेलेक्स का मापन

के व्यास की गणना भी किमी. में कर सकते हैं। हमें सूर्य का कोणीय व्यास अर्थात् नेत्र और सूर्य के दोनों किनारों के बीच खींची गई रेखाओं के बीच का कोण ज्ञात है। चाप पर इसका औसत मान 32 मिनट यानी आधा अंश से थोड़ा अधिक होता है। यदि प्रेक्षक *A* ने शुक्र के *C* बिंदु पर प्रवेश और *D* बिन्दु पर निर्गम के समय का सावधानी के साथ मापन किया है तो वह *CD* रेखा को पार करने में लगे समय को ज्ञात कर लेगा। उसके बाद कक्षा में पृथ्वी और शुक्र के परिभ्रमण के वेग की सटीक जानकारी करके वह *CD* रेखा की लंबाई बता सकता है (किमी. में नहीं, मिनटों में)। यह आकलन करने के लिए उसे न केवल अपनी कक्षा में ग्रहों की गतियों बल्कि पृथ्वी के परिक्रमण के कारण उत्पन्न प्रभाव को भी ध्यान में रखना होगा। इसी प्रकार *FG* रेखा का आकलन भी मिनटों में किया जा सकता है। इन लंबाइयों की सहायता से 'ab' की लंबाई की गणना आसानी से की जा सकती है। दोनों रेखाओं के बीच की दूरी का ज्ञान मिनटों में किया जा सकता है। लेकिन हमें 'ab' का मान पहले से ही किमी. में ज्ञात है, अतः इन दोनों मानों की सहायता से हम निर्धारित कर सकते हैं कि सूर्य की दूरी के संदर्भ में प्रति मिनट या प्रति सेकेंड अथवा चाप का कोई अंश कितने किलोमीटरों का प्रतिनिधित्व करता है। गणना के अनुसार, चाप के प्रत्येक सेकंड के लिए यह मान 735 किमी. है। अतः पृथ्वी की त्रिज्या द्वारा सूर्य के केन्द्र पर अंतरिक्ष कोण अथवा सौर पैरोलेक्स का मान पृथ्वी की त्रिज्या का 735 किमी. का कोई भागफल होना चाहिए। गणना करके इसका मान 8.7 सेकंड निर्धारित किया गया है। इस संबंध में की जाने वाली गणनाओं का उल्लेख बाक्स 3 में किया गया है।

शुक्र के पारगमन का उपयोग करके सौर पैरोलेक्स की गणना करने के लिए ठीक–ठीक यही पद्धति नहीं अपनाई जाती। प्रेक्षक केवल दो नहीं, बल्कि अनेकों हो सकते हैं। इसी तरह गणना–प्रक्रिया यहां उल्लिखित प्रक्रिया जितनी सरल नहीं है। इसके लिए परिणामों को प्रभावित करने वाली हर स्थिति को ध्यान रखना होता है और उपकरणीय त्रुटियों का परिमार्जन करना होता है। सन् 1761 और सन् 1769 के पारगमनों के प्रेक्षणों के आधार पर की गई गणना के अनुसार सौर पैरोलेक्स का मान 8.5776 सेकंड निर्धारित किया गया और उसकी संगतता में पृथ्वी से सूर्य की दूरी लगभग 152×10^6 किमी निर्धारित की गई, हालांकि इसे अंतिम रूप से स्वीकार नहीं किया गया। इन अवलोकनों में विसंगतियां और अनियमितताएं थीं। इस समय चाप पर सौर दिग्भेद का स्वीकार्य मान 8.79418 मिनट है।

बाक्स 3

पृथ्वी से सूर्य कितनी दूर है?

चित्र 3 का संदर्भ लें। हम जानते हैं कि सूर्य का कोणीय व्यास 31′ 30′′, यानी 1890′′ है।

यह स्पष्ट है कि $ab / AB = aV / VA = R_V / (R_E - R_V)$

जहां R_V तथा R_E शुक्र तथा पृथ्वी की कक्षीय त्रिज्या (अर्द्धव्यास) हैं।

अतः $ab = AB [(R_V / (R_E - R_V)]$

इसलिए $ab = AB ((R_V / R_E)$ ¸ $(1 - (R_V / R_E)$, लेकिन हम R_V / R_E? को कैसे ज्ञात करेंगे।

हमें R_V / R_E का पता कैसे चले?

केप्लर के ग्रहीय गतियों से संबंधित तीसरे नियम के अनुसार

$T_V^2 / T_E^2 = R_V^3 / R_E^3$

अतः $R_V/R_E = \sqrt[3]{(T_V^2 / T_E^2)}$

हमें ab की गणना कोणीय माप में करने की आवश्यकता पड़ेगी। चूंकि दोनों प्रेक्षकों A और B की स्थिति ज्ञात है, अतः उनके बीच की दूरी किलोमीटर में ज्ञात की जा सकती है। इस प्रकार हमें तत्काल ही ab की दूरी भी किलोमीटरों में ज्ञात हो जाएगी। हमें मालूम है कि सूर्य का कोणीय व्यास 31′ 30′′, यानी 1890′′ है। यदि A ने ′′C′′ बिन्दु पर ग्रह के अंतर्गमन और D बिन्दु पर उसके निगर्मन का समय काफी सावधानी से नोट किया हो तो वह शुक्र के CD रेखा पार करने के समय को ज्ञात कर सकता है। अपनी कक्षाओं में शुक्र और पृथ्वी के परिक्रमण का वेग ज्ञात कर वह CD रेखा की बिल्कुल सटीक लंबाई बता सकता है, पर किमी. में नहीं, बल्कि मिनट में। इसी तरह FG रेखा की लंबाई भी मिनटों के पैमाने पर ज्ञात की जा सकती है। इन लंबाइयों की सहायता से ab की लंबाई भी मिनटों के रूप में ज्ञात की जा सकती है

लेकिन हमें ab की लंबाई किमी. में पहले से ही मालूम है। इन दोनों मानों की सहायता से हम आसानी से निर्धारित कर सकते हैं कि सूर्य की दूरी के संदर्भ में प्रत्येक मिनट, सेकंड या चाप के किसी अंश के लिए किलोमीटरों का मान क्या होगा। गणना करके चाप के प्रत्येक सेकंड के लिए इसका मान 725 किमी. निर्धारित किया गया है। अब हम सौर पैरेलेक्स की गणना आसानी के साथ कर सकते हैं। यह पृथ्वी की त्रिज्या का 735 किमी. का भागफल होना चाहिए। वस्तुतः सौर पैरेलेक्स = 6400/735 = लगभग 8.7′′

अब α = पृथ्वी की त्रिज्या/पृथ्वी की कक्षा की त्रिज्या, अतः 1AU = पृथ्वी की त्रिज्या/α, यहां पर α का कोणीय मापन (त्रिज्या–कोण) किया जाता है और जब 8.7′′ को कोणीय मापन के रूप में प्रतिपादित किया जाता है तो इसका मान 4.2×10^{-5} चाप कोण (रेडियम) के रूप में प्राप्त होता है। हमें ज्ञात है कि पृथ्वी की त्रिज्या 6400 किमी. है। अतः $1AU = 6400 \div (4.2 \times 10^{-5})$, अथवा लगभग 151×10^6 किमी.। अब हम सौरमंडल का विस्तार माप सकते हैं।

शुक्र के पारगमनों की आवृत्ति

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, शुक्र के पारगमन एक विशिष्ट क्रम में घटित होते हैं ओर इनके बीच क्रमशः 8,121.5,8 और 105.5 वर्षों के चार अनियमित अंतराल होते हैं (बाक्स 4–अ)। हम इस विचित्र क्रम की व्याख्या कैसे करेंगे? यदि शून्य समय पर पृथ्वी, शुक्र और सूर्य आरोह पात बिन्दु (चित्र 2) पर एक ही सीध में हो, यानी एक पूर्ण केंद्रिक पारगमन घटित हो तो यह दुबारा तभी घटित हो सकता है जब शुक्र और पृथ्वी दोनों अपना परिभ्रमण एक पूर्णांकीय संख्या में संपूर्ण कर चुके हों। इन पूर्णांकीय संख्याओं को क्रमशः n और N से से अभिसूचित कर सकते हैं। पृथ्वी को अपनी कक्षा का परिक्रमण करने में 365. 25636 दिन लगते हैं जबकि शुक्र को अपनी कक्षा की परिक्रमा करने में 224. 701 दिन लगते हैं।

अतः 224.701 n = 365.25636 N निश्चित रूप से इस तरह की अभिव्यक्तियों में सम्मेयता निहित नहीं होती, परिणामस्वरूप यह समीकरण कभी

पूरी तरह संतुष्ट नहीं कर पाता। इसके बावजूद पंक्ति बंधन के निकट स्थित आरोह पात बिन्दु पर n और N के उन मूल्यों के लिए समानता घटित होती है जो बाक्स 4ब में दर्शाये गये हैं। हम तालिका में देख सकते हैं कि पृथ्वी, शुक्र और सूर्य के पंक्तिबद्ध होने की दो घटनाओं के बीच का अंतराल शुक्र के सभी पारगमनों की अलग–अलग तिथियां निर्धारित करने की दृष्टि से बहुत अधिक है। पर हमें याद रखना चाहिए कि ग्रहों के पंक्तिबद्ध होने की यह घटना अवरोह पात बिन्दु पर भी घटित हो सकती है। अब हमारे समक्ष उपस्थित प्रश्न यह है कि पारगमन की घटना कब घटित होनी चाहिए? इन्हें आरोह पात पर से शून्य समय में गुजरने के बाद पृथ्वी और सूर्य की कक्षाओं की पूर्ण संख्या ''अधिक'' आधी कक्षा की स्थिति आने पर घटित होना चाहिए। अतः दूसरा समीकरण इस प्रकार होगा :

$$224.701\,(n+1/2) = 365.25636\,(N+1/2)$$

अब हमारे पास अवरोह पात बिन्दु पर घटित होने वाले पारगमनों की एक सूची उपलब्ध है (बाक्स 4 क)।

बाक्स 4 ब और 4 क में क्रमिक ढंग से आरोह पात और अवरोह पात पर पारगमनों के घटित होने की स्थिति को दर्शाते हुए उनकी तिथियों का भी उल्लेख किया गया है। इस तथ्य को भी ध्यान में रखना चाहिए कि आरोह पातीय पारगमन दिसम्बर में ओर अवरोह पातीय पारगमन जून के महीने में घटित होते हैं। हमने यहां पर मान लिया है कि शुक्र का परिक्रमा पथ में लगभग वृत्ताकार है, इसलिए तारों के सापेक्ष शुक्र का आरोह पात से अवरोह पात तक की परिक्रमा का काल उसकी पूरी कक्षा के परिक्रमा काल का ठीक आधा होगा। पृथ्वी और शुक्र के परिक्रमा–कक्षों को पूर्ण केंद्रिक मानने के साथ ही हमने यह भी मान लिया है कि पातों की स्थिति समय की सापेक्षता में अपरिवर्तनीय है। इनमें से कोई भी अवधारणा

बाक्स 4अ

शुक्र के पारगमन की आवृत्तियां

प्रथम दृष्टि में ही सौर पारगमनों की आवृत्ति में एक विचित्र ढंग की आवर्तिता (पीरियाडिसिटी) नजर आएगी। यहां 17वीं से 21वीं सदी तक घटित हुए सौर पारगमनों की तालिका प्रस्तुत की गई है –

वर्ष	तिथि	पात	पिछले पारगमन के बाद का अंतराल (वर्षों में)
1631	7 दिसम्बर	आरोह	–
1639	4 दिसम्बर	आरोह	8
1761	6 जून	अवरोह	121½
1769	3-4 जून	अवरोह	8
1874	9 दिसम्बर	आरोह	105½
1882	6 दिसम्बर	आरोह	8
2004	8 जून	अवरोह	121½
2012	6-7 जून	अवरोह	8

तालिका 4 ब

पृथ्वी द्वारा अपनी कक्षा की परिक्रमित संख्या	शुक्र द्वारा अपनी कक्षा की परिक्रमित संख्या	अंतर (घंटों में)
0	0	0
8	13	22.5
235	282	12.9
243	395	9.6
478	777	3.3

बाक्स 4 क

पृथ्वी द्वारा अपनी कक्षा की परिक्रमित संख्या	शुक्र द्वारा अपनी कक्षा की परिक्रमित संख्या	अंतर (घंटों में)
113½	184½	17.7
121½	197½	4.8
356½	579½	8.1
364½	592½	14.4

पूरी तरह सही नहीं है। इसलिए ऊपर प्रस्तुत समीकरण केवल उदाहरणत्मक प्रकृति के हैं।

यह कार्य इतना सरल नहीं है

सन् 1716 में सौर दिग्भेद की गणना करने के लिए एडमंड हैली द्वारा अपनाई गई पद्धति सन् 1761 और सन् 1769 में घटित शुक्र के पारगमनों के प्रेक्षण का आधार थी पर उसके सुझावों को जब व्यावहारिक रूप दिया गया तो उनमें भौगोलिक त्रुटियां पाई गईं। अतः उस पद्धति में कुछ परिवर्तन किए गए। **इसके बावजूद 18वीं सदी में सूर्य की दूरी की गणना करने का मूल आधार हैली द्वारा प्रस्तुत की जा चुकी योजना ही थी।** चित्र 3 में दर्शाए गए *CD* और *FG* मार्गों के बीच के अंतर का निर्धारण करेन की हैली की पद्धति की क्षमता ही उसकी सबसे प्रभावी विशिष्टता थी। सूर्य के केन्द्र से अपेक्षाकृत अधिक दूरी पर स्थित मार्ग *FG* दूसरे माग्र की तुलना में छोटा है। इएलिए यदि शुक्र के पारगमन को दक्षिणी गोलार्ध के किसी केन्द्र से प्रेक्षित किया जाय तो यह उत्तरी गोलार्ध के किसी केन्द्र से प्रेक्षित की गई उसकी गति की तुलना में अधिक तीव्रता से पारगमन करता प्रतीत होगा। इसलिए हैली ने सूर्य के समक्ष शुक्र द्वारा व्यतीत किए जाने वाले समय को मापने के लिए केवल एक दूरदर्शी एवं एक अच्छी समय–मापी घड़ी

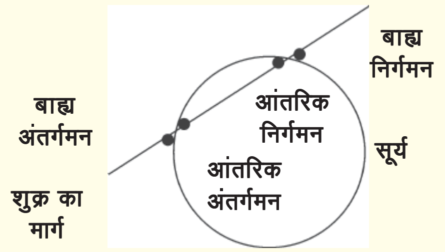

चित्र 4 : पारगमन के समय की परिस्थिति

के उपयोग का सुझाव दिया। उसके बाद दोनों गोलार्धों के विभिन्न केन्द्रों पर उपस्थित अवलोकनकारों द्वारा अवलोकित समय के अंतर के आधार पर शुक्र और सूर्य के पैरेलेक्स की गणना की जा सकेगी। इस तरह उसकी योजना के अनुसार पारगमन के पारंभ और समाप्ति के समय का बिल्कुल सटीक निर्धारण आवश्यक था। अतः चार बिल्कुल सटीक युग्मित अवलोकन था। अतः चार बिल्कुल सटीक अवलोकन – अर्थात् पारगमन की घटना के दौरान शुक्र के प्रवेश तथा निर्गमन की प्रक्रिया के दौरान होने वाले बाह्य और आंतरिक संपर्कों के समय की गति का प्रेक्षण आवश्यक था (चित्र 4)।

पृथ्वी के परिक्रमण के कारण समस्या और जटिल हो जाती है। इसके कारण पारगमन के वास्तविक समय और प्रेक्षित समय में वृद्धि या कमी आ जाती है। समय का बढ़ना और घटना इस तथ्य पर निर्भर होता है कि प्रेक्षक कहां उपस्थित है, और पृथ्वी की परिक्रमण की दिशा क्या है। इसके अलावा पृथ्वी के परिक्रमण के कारण यह समस्या भी उपस्थित होती है कि परिघटना का प्रेक्षण करने के लिए प्रेक्षक के लिए सर्वाधिक उपयुक्त भौगोलिक स्थिति कौन सी होगी। हैली की तकनीक के अनुसार, प्रेक्षक को कारगर बनाने के लिए पारगमन की संपूर्ण घटना का प्रेक्षण किया जाना चाहिए। पूरी घटना का अवलोकन करने के लिए यह तकनीक सुझाव देती है कि जिस शंकु में पारगमन की घटना दिखाई देती है उस शंकु में उत्तर और दक्षिण से अवलोकन करने वाले अवलोकनकारों के बीच अधिक से अधिक फासला होना चाहिए। ऐसा अवलोकन समय को अधिक से अधिक बढ़ाने के लिए किया जाता है, ताकि त्रुटियां यथा संभव कम हों।

सूर्य पर किए जाने वाले अवलोकनों की अपनी अलग ढंग की कठिनाइयां हैं। एक तो वह बेहद गर्म और चमकीला है, इसके अतिरिक्त उसकी सतह समतल और स्थिर नहीं रहती। उसमें प्रचंड हलचलें होती रहती हैं। अतः हमें सूरज की

जिस चकती पर शुक्र के अंतर्गमन और निर्गम का अवलोकन करना होता है उसके किनारे कटे फटे और अनियमित होते हैं। इसके अलावा हमारी ओर अभिमुख शुक्र ग्रह का काला चेहरा वास्तविक संपर्क शुरू हो जाने के पहले तक

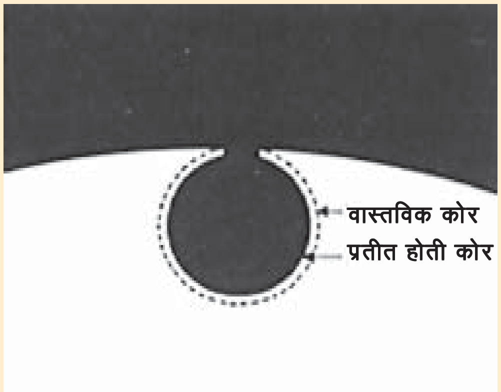

चित्र 5 : ब्लैक ड्राप प्रभाव

नहीं दिखता। अतः प्रेक्षक को कुछ सेकंड अथवा सेकंड के एक अंश के लिए भी यह अवसर नहीं मिलता कि वह वास्तविक संपर्क से पहले ग्रह को देख कर उसकी स्थिति को समझ सके। इस कठिनाई के कारण बाह्य संपर्क को प्रेक्षित कर पाना खास तौर पर कठिन हो जाता है। लेकिन जब आंतरिक संपर्क के चरण का अवलोकन किया जाता है तो एक नई तरह की कठिनाई उपस्थित हो जाती है। देखा जाता है कि सूर्य की कोर से अलग होने के बाद भी शुक्र उससे काफी देर तक एक काले बंधन के जरिए जुड़ा रहता है। धीरे–धीरे यह बंधन पतला होता जाता है और अंततः टूट जाता है। खगोल विज्ञान में यह घटना, ब्लैक ड्राप इफेक्ट के नाम से विख्यात (या कुख्यात) है। इस प्रभाव के कारण पारगमन के प्रेक्षण के माध्यम से खगोलीय इकाई के निर्धारण में बाधा उपस्थित होती है।

लेख के अंत में हम कहना चाहेंगे कि 17वीं सदी में शुक्र के पारगमन का प्रेक्षण जेरेमी होरोक्स और उसके मित्र क्रैबट्री ने व्यक्तिगत स्तर पर किया। उस समय लोगों को सूर्य की दूरी मापने में इस घटना की उपयोगिता का ज्ञान नहीं था। तब तक वैज्ञानिक रुचियों का विकास भी नहीं हो सका था। लेकिन सन् 1761 और सन् 1769 के पारगमनों के समय तक लोग इस संबंध में काफी उत्साहित हो चुके थें इसका प्रमाण इस तथ्य से मिल जाता है कि होरोक्स और क्रैबट्री को केवल शुक्र का पारगमन देख सकने की सीमित सफलता मिली थी पर इसके विपरीत सन् 1761 में 120 प्रेक्षकों ने पृथ्वी के 62 केन्द्रों से पारगमन का प्रेक्षण किया और उनके वे प्रेक्षण तालिकाबद्ध किए गए। इसी तरह सन् 1769 के पारगमन का 138 पेक्षकों ने 63 केन्द्रों से प्रेक्षण किया। हम आने वाले दिनों में एक लेख के माध्यम से शुक्र के पारगमन के प्रेक्षण संबंधी अभियानों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करेंगे।

विस्तृत जानकारी के लिए पढ़ें

1. द ट्रांजिट आफ वीनस : ए स्टडी ऑफ एटींथ सेंचुरी साइंस, लेखक हैरी बुल्फ, प्रिंसटन विश्वविद्यालय प्रेस) सन् 1959)।
   प्रस्तुत लेख मुख्यतः इसी पुस्तक पर आधारित है। इसमें 18वीं सदी में सौर पारगमन को मापने के प्रयासों का अत्यंत प्रभावशाली विवरण प्रस्तुत किया गया है।
2. द ट्रांजिट ऑफ वीनस – लेखक डेविड मुरे, 6 दिसम्बर, 1874, http:// home.att.net/~o.caimi/VENUS.pdf
3. ट्रांजिट ऑफ द सन – लेखक फ्रेड एस्पेनैक http://sunearth.gsfc.nasa.gov/eclipse/transit/transit.html
   दशकों से पारगमनों के अध्ययन और भविष्यवाणी के कार्य में लगे एक अत्यंत अनुभवी खगोलविज्ञानी ने इस पुस्तक में पारगमनों का अत्यंत प्रामाणिक ब्यौरा प्रस्तुत किया है।
4. ए न्यू मेथड ऑफ डिटर्मिनिंग द पैरेलेक्स ऑफ द सन – लेखक – एडमंड हैली। फिलासॉफिकल ट्रांसेकशन्स् ऑफ रॉयल सोसाइटी, खंड 29, सन् 1716, पृष्ठ 454–464। http://sunearth.gsfc.nasa.gov/eclipse/transit/ HalleyParallax.html पर उपलब्ध है।
   ये अत्यंत प्रेरणादायक लेख है। पारगमनों के ऐतिहासिक आयामों में रुचि रखने वाले हर व्यक्ति के लिए यह एक जरूरी लेख है।
5. Http://www.dsellers.demon.co.uk/venus/ven-eh5.htm
   यहां प्रकाशित लेख में पारगमनों की आवृत्ति से संबंधित जानकारी इसी लेख से ग्रहण करके प्रस्तुत की गई है।

शब्दावली

आरोह पात : इसे उत्तर बंधित पात भी कहते हैं। यह किसी ग्रह या धूमकेतु के कांतिवृत्त में प्रवेश करके उत्तर की ओर बढ़ने का बिंदु होता है।

खगोलीय इकाई : (ऐस्ट्रोनॉमिकल यूनिट – संक्षेप में AU कहते हैं) : यह सौरमंडल में दूरी मापने का पैमाना है, जो पृथ्वी से सूर्य की माध्य दूरी, यानी लगभग 1,49,598,000 किमी. के बराबर होता है।

श्याम पात : शुक्र या बुध का बिंब जब सूर्य के कोर पर होता है, तो दूरदर्शी से देखने पर उसमें एक काला उभार दिखाई देता है, उसी को 'श्याम पात' कहते हैं।

अवरोह पात : जिस बिंदु पर कोई ग्रह या धूमकेतु कांतिवृत्त में प्रवेश कर उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ता है।

कांतिवृत्त : (1) तारों के बीच सूर्य की दृश्यमान वार्षिक गति; खगोल के सापेक्ष पृथ्वी के कक्ष की तल की कटान।
(2) पृथ्वी के सौर परिक्रमा कक्ष का तल।

निर्गमन : किसी ग्रहण के समय चंद्रमा का पृथ्वी की दाया से अथवा किसी ग्रह का सूर्य की चकती के समक्ष से प्रस्थान।

अंतर्गमन : ग्रहण के समय चंद्रमा का पृथ्वी की छाया में अथवा किसी ग्रह का सूर्य की चकती के समक्ष प्रवेश।

दिग्भेद : दिग्भेद को अंतरिक्ष के किसी बिन्दु से दिखने वाले दो बिंदुओं के बीच की कोणीय दूरी के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है। किसी तारे से दिखने वाली पृथ्वी की कक्षा की त्रिज्या इसका उदाहरण है।

त्रिज्या कोण : समान लंबाई की दो त्रिज्याओं और एक चाप द्वारा निर्मित किए जाने वाला किसी वृत्त का केन्द्रीय कोण।

सौर दिग्भेद : सूर्य का माध्य भूमध्यरेखीय क्षैतिज दिग्भेद पी, सूर्य की माध्य दूरी ए पर पृथ्वी की भूमध्यरेखीय त्रिज्या पर निर्मित किया जाने वाला कोण।

पारगमन : किसी छोटे खगोलीय पिंड का अपेक्षाकृत बड़े खगोलीय पिंड के समक्ष से गुजरना।

शुक्र का पारगमन.... *पृष्ठ 2 का शेष*

ध्यान देने वाली महत्वपूर्ण बात यह है कि मंगल पर वाहन उतारने के लिए पांच दशकों के दौरान करीब 37 अभियानों के साथ गहन प्रयास किये गये। इस लाल ग्रह पर मानव के उतरने और उसकी सतह पर एक 'छोटा कदम' बढ़ाने में कुछ और दशक लग सकते हैं। मंगल भव्य ग्रह है और यह तब तक रहेगा जब तक यह सिद्ध न हो जाय कि यह जीवनविहीन है। लगभग एक वर्ष पहले, 01 फरवरी, 2003 को, स्पेस शटल कोलम्बिया अपनी वापसी के दौरान टूटकर बिखर गया था जब वह पृथ्वी से मात्र 16 मिनट की दूरी पर था। चालक दल के सभी सात अंतरिक्षयात्री मारे गये थे। ब्रह्मांड नागरिक कल्पना चावला उनमें से एक थी। मंगल की सतह पर सैर कर रहे स्पिरिट और अपॉर्चुनिटी इन शहीदों को श्रद्धांजलि प्रदान कर रहे हैं जिन्होंने हमारे ज्ञान को उच्च सीमा तक ले जाने में सहायता की। आज, हम आश्वस्त नहीं हो सकते कि मंगल पर कोई जीवन है या अतीत में कभी था, लेकिन एक बात निश्चित है कि एक दिन हम यह जानने में कामयाब हो जाएंगे।

❑ विनय बी. काम्बले

फ़ादर यूजीन लाफों

विज्ञान का एक नि:स्वार्थ भारतीय मिशनरी

❑ सुबोध महंती
e-mail: mahantisubodh@hotmail.com

निस्संदेह फ़ादर लाफों में एक शिक्षाविद् के उत्कृष्ट गुण होने के साथ ही लोकप्रिय वैज्ञानिक वक्ता होने की जन्मजात प्रतिभा भी निहित थी। उनमें शुष्क तथ्यों को लोकप्रिय ढंग से प्रस्तुत करने का जितना विलक्षण कौशल था, उतनी ही मात्रा में अपने व्याख्यानों को प्रायोगिक उदाहरणों के माध्यम से रोचक बनाने की निपुणता भी थी।

नेचर, 14 मई, सन् 1908, पृष्ठ 35

लाफों के व्यक्तित्व का सबसे रोचक पहलू यह था कि वह धर्म के क्षेत्र से संबंधित थे और उन्होंने धर्म के साथ विज्ञान को संश्लेषित करने का प्रयास किया। उनके अनुसार, ईश्वर और ईश्वर के सकारात्मक कार्यों को पृथक नहीं किया जा सकता, क्योंकि सत्य का एक स्वरूप मूलत: उसके दूसरे स्वरूप का विरोधी नहीं हो सकता। हम इस तथ्य पर बल देना चाहेंगे कि उनके इस संश्लेषणात्मक दृष्टिकोण में उनके समकालीन बुद्धिजीवियों ने व्यापक स्तर पर भागीदारी की।

अपनी पुस्तक 'फ़ादर यूज़ीन लाफों ऑफ सेंट जेवियर्स कालेज, कोलकाता एंड द कन्टेम्परेरी साइंस मूवमेंट' में अरुण कुमार विस्वास, द एशियाटिक सोसाइटी, कोलकाता, सन् 2001

''उस कालेज (सेंट जेवियर्स) में फ़ादर लाफों के भौतिकी के प्रोफेसर रहने की अवधि में उनके शिष्य रह चुके सभी लोग उनके अध्यापन के प्रभाव को वास्तविक अर्थों में शिक्षाप्रद मानते हैं। प्रयोगों की उनकी संपदा और उन्हें अत्यंत स्पष्टता से प्रदर्शित करने की क्षमता – उनकी कक्षा को कालेज की सर्वाधिक रुचिकर कक्षा बना देती थी......''

पेट्रिक गेडेस : एन इंडियन पायनियर ऑफ साइंस : दि लाइफ एण्ड वर्क ऑफ सर जगदीश सी. बोस लांगमैन्स, ग्रीन एण्ड कं., 1920

हालांकि मैं एक कैथोलिक और पुजारी हूं, पर मैं विज्ञान के क्षेत्र में हुई किसी भी वास्तविक प्रगति का प्रसन्नता के साथ स्वागत करूंगा, तथा अनुराग के साथ उसे और आगे बढ़ाने का प्रयास करूंगा। मुझे भय केवल छद्म खोजों से लगता है, क्योंकि मनुष्य केवल तथ्यों से संतुष्ट नहीं होता। इसके बजाय वह अपनी कल्पनाओं के अधकचरे अवलेप को वैज्ञानिक रूढ़ियों का रूप दे देता है।

फादर यूजीफ लाफों

भारत के आधुनिक विज्ञान के इतिहास में फ़ादर यूज़ीन लाफों का अनूठा स्थान है। वह सन् 1864 में 34 साल की उम्र में कोलकाता आए। उन्हें 7 दिसंबर सन् 1865 में सेंट जेवियर्स कालेज में नियुक्त किया गया, और वे इसके साथ 43 सालों तक संबद्ध रहे (सन् 1865–1908)। सेंट जेवियर्स कालेज में उन्होंने 'विज्ञान पढ़ाया, विज्ञान की शिक्षा दी (निस्संदेह धर्म की शिक्षा के साथ) और विज्ञान को व्यवहार में ढाला।' उन्होंने वहां आधुनिक भारत के पहले वैज्ञानिक माने जाने वाले जगदीश चन्द्र बोस और बाद में ख्याति प्राप्त करने वाले कई अन्य छात्रों को पढ़ाया। फ़ादर लाफों के मार्गदर्शन में सेंट जेवियर्स कॉलेज में खगोल विज्ञान और मौसम विज्ञान की वेधशालाएं तथा भौतिकी की प्रयोगशाला स्थापित की गई। उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय को विज्ञान की पूर्वस्नातक कक्षाएं शुरू करने के लिए प्रेरित करने में निर्णायक भूमिका निभाई। उन्होंने महेन्द्र लाल सरकार के साथ मिलकर 'इंडियन एसोसिएशन फार द कल्टिवेशन ऑफ साइंस' की स्थापना की। सन् 1876 में स्थापित की गई यह एसोसिएशन भारत में रहने वाले भारतीयों द्वारा स्थापित एवं प्रबंधित वैज्ञानिक शोध–संबंधी पहली संस्था थी। फादर लाफों यदि आधुनिक भारतीय विज्ञान के एक शिल्पकार के रूप में याद किया जाता है, तो यह उचित ही है। अरुण कुमार विस्वास ने लिखा है : ''औपनिवेशिक सोच वाले लोगों के विपरीत लाफों और महेंद्र लाल सरकार राष्ट्रीयतावादी सोच वाली जमात में भारतीय विज्ञान आंदोलन के सच्चे पथ प्रदर्शक थे। उन दोनों को आधुनिक भारतीय विज्ञान का जुड़वां पिता ठीक कहा जाता था। जे.सी. बोस, सी.वी. रमन आदि उनके नेतृत्व के प्रति अत्यन्त ऋणी थे। लाफों ने सेंट जेवियर्स कालेज में मौसम विज्ञान और खगोल विज्ञान की वेधशालाएं स्थापित कीं। लेकिन अपनी अन्य सभी गतिविधियों की तुलना में उन्होंने वैज्ञानिक व्याख्यानों और प्रदर्शनों के क्षेत्र में श्रेष्ठता के उत्कृष्टतम छोर को छू लिया था। उन्होंने 18 सितंबर, 1868 को कलकत्ता की जनता के समक्ष अपना विज्ञान–संबंधी पहला सार्वजनिक प्रदर्शन किया, और उसके बाद उनके व्याख्यान आजीवन चलते रहे।''

फादर यूजीन लाफों

फ़ादर लाफों धर्म के क्षेत्र से संबंधित थे; पर उन्हें विज्ञान के अध्यापन और शिक्षण के लिए अपना जीवन समर्पित करने में कोई विरोधाभास नहीं दिखा। उन्होंने धर्म का भी उतने ही उत्साह से अनुपालन किया। फादर लाफों इस विचार के प्रबल विरोधी थे कि विज्ञान और धर्म साथ–साथ नहीं बढ़ सकते। उनका मानना था कि सत्य का एक स्वरूप दूसरे स्वरूप का विरोधी नहीं हो सकता। लेकिन वह पदार्थ की तुलना में मन या आत्मा को अपेक्षाकृत अधिक ऊंचे सोपान पर रखते थे। वह विज्ञान और धर्म के बीच एक संतुलित प्रतिबद्धता के पक्षधर थे। विज्ञान–संबंधी जन उपयोगी व्याख्यान देने के साथ ही उन्होंने ईश्वरीय मीमांसा–संबंधी अपना अध्ययन भी जारी रखा। सेंट थामस चर्च में दिए गए उनके उपदेश (वह वहां पादरी थे) इतने लोकप्रिय हुए कि उन्होंने गैर कैथोलिकों तक को आकर्षित किया।

फ़ादर लाफों का जन्म बेल्जियम के बिलकुल दक्षिणी भाग में स्थित एक

छोटे से कस्बे मोंस में 26 मार्च, 1837 को हुआ था। उनके पिता पियरे लाफों एक फौजी अफसर थे। उन्होंने अपनी प्रारंभिक शिक्षा घेंट (या गेंट) स्थित सेंट बार्बोरा कालेज में प्राप्त की जहां उनके पिता उन दिनों नियुक्त थे। दिसंबर, 1854 में वह सोसाइटी ऑफ जीसस में शामिल हो गए। उस धार्मिक संस्था द्वारा निर्धारित आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद फादर लाफों ने दर्शन और प्राकृतिक विज्ञानों के अध्ययन के लिए नैमर कॉलेज में दाखिला ले लिया। सन् 1860 में कलकत्ता में सेंट जेवियर्स कालेज की स्थापना करने वाले फादर डेपेल्शिन उन दिनों नैमर कालेज में पादरी (मिनिस्टर) थे। सेंट जेवियर्स कालेज की स्थापना के पांच वर्षों बाद उन्होंने फ़ादर लाफों से भौतिकी पढ़ाने का अनुरोध किया। 7 दिसम्बर, 1865 को लाफों सेंट जेवियर्स कालेज पहुंचे। सबसे पहले उन्हें स्कूल के पांचवें वर्ष के छात्रों, यानी प्रवेश–पूर्व कक्षा को पढ़ाने का दायित्व सौंपा गया। सन् 1867 में जब सेंट जेवियर्स में बी.ए. की कक्षा शुरू हुई, तो फादर लाफों को वहां के स्कूली प्रभाग से प्रोन्नत कर कालेज के दर्शन संकाय का दायित्व संभालने के लिए भेज दिया गया। वहां पर उन्होंने मनोगत एवं नैतिक दर्शन शास्त्र का अध्यापन भी किया। सन् 1871 में वह सेंट जेवियर्स के रेक्टर बना दिए गए।

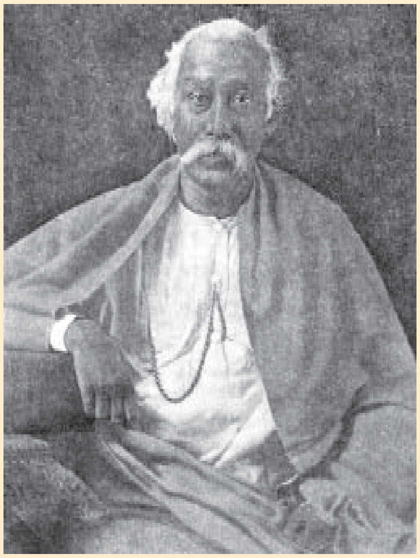

डॉ. महेन्द्रलाल सरकार

फादर लाफों को प्रायः आधुनिक भारत के पहले वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र बोस के अध्यापक के रूप में जाना जाता है। प्रायोगिक विज्ञान की दिशा में बोस को फादर लाफों ने ही प्रेरित किया था। बोस के जीवनी–लेखक प्रैट्रिक गेडेस ने लिखा है : ''उनके (फादर लाफों के) अध्यवसाययुक्त कौशल, निपुणता और प्रयोग–संबंधी बुद्धिमत्ता को इस युवा छात्र ने सर्वाधिक सराहा। यहीं पर बोस को बौद्धिक प्रांजलता के साथ प्रायोगिक उक्तियों की संपदा एवं स्रोतों को समन्वित करने के विषय का वह पहला प्रशिक्षण मिला, जिसके लिए उन्होंने अपने पुराने गुरु से भी आगे जाकर उनका प्रतिनिधित्व लिया। इस कारण उनका सम्मान भी बढ़ाया।'' बोस के बारे में फादर लाफों की शुरू से ही काफी ऊंची राय थी। 12 अप्रैल, 1880 को बोस को दिए गए एक प्रमाणपत्र में उन्होंने लिखा : ''मैं प्रमाणित करता हूं कि बाबू जगदीश चन्द्र बोस, बी.ए. ने मुझसे चार साल तक भौतिक विज्ञान की शिक्षा प्राप्त की है और उन्होंने अध्ययन के क्षेत्र में असाधारण प्रवीणता के कई प्रमाण दिए हैं। मेरे विचार से वह हमारे कालेज विभाग के सर्वश्रेष्ठ छात्रों में से एक रहे हैं।'' फादर लाफों का मानना था कि बोस ने वायरलेस संचार का आविष्कार मार्कोनी से पहले किया था। उनकी इस धारणा की जानकारी अगस्त 1897 के आस–पास बोस को लिखे गए उनके एक पत्र से मिलती है। पत्र में लाफों ने लिखा था : ''मैं बेतार – टेलीग्राफी के बारे में सेंट ज़ेवियर्स कालेज में एक सार्वजनिक व्याख्यान देना चाहता हूं, पर आपने कृपापूर्वक मुझे जो उपकरण दिए थे, वे काम नहीं कर रहे हैं और चूंकि मैं इस अवसर का उपयोग मार्कोनी की तुलना में आपके अधिकार की प्राथमिकता को सिद्ध करने के लिए करना चाहता हूं, अतः क्या आप स्वयं उपस्थित होकर और अपने उपकरणों के प्रयोग को स्वयं दर्शाकर व्याख्यान में मेरी सहायता करेंगे। कृपया मुझे शीघ्रातिशीघ्र सूचित करें क्योंकि मैं लेफ्टिनेंट गवर्नर को आमंत्रित करना चाहता हूं........।'' बोस अपने इस असाधारण शिक्षक को हमेशा कृतज्ञ भाव से याद करते थे।

सैन्स सौसी : सेंट जेवियर कालेज में परिवर्तित थियेटर

लाफों रचनात्मक शोध वैज्ञानिक नहीं थे, पर वे एक लोकप्रिय विज्ञान प्रवक्ता से भी अधिक बहुत कुछ थे। इस बारे में अरुण कुमार विस्वास ने लिखा है : ''लाफों ने नवीनतम वैज्ञानिक खोजों को जिस ढंग से समझा और व्याख्यायित किया उससे विज्ञान के क्षेत्र पर उनके अधिकार का ज्ञान होता है। भौतिकी के अध्ययन में उन्होंने उच्च स्तर की जो निपुणता प्राप्त की, उससे प्रमाणित होता है कि यदि वे यूरोप में ही रहे होते तो उन्हें विज्ञान के क्षेत्र में अत्यंत विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ होता। लेकिन उन्होंने स्वयं को बंगाल मिशन के लिए समर्पित कर दिया, क्योंकि बंगाल की अनेकों आवश्यकताएं थीं।'' देश में एक वैज्ञानिक वातावरण निर्मित करने में उनका योगदान अत्यन्त उल्लेखनीय था। उन्होंने सेंट जेवियर्स कॉलेज में विज्ञान के दायरे का विस्तार किया। उनके आग्रह पर विज्ञान का ज्ञान रखने वाले पादरियों को बेल्जियम से कलकत्ता भेजा गया। कॉलेज में उन्होंने एक पूरी तरह सुसज्जित प्रयोगशाला की स्थापना की। उसका निर्माण उन्होंने मुख्यतः अनुदानों और उनके व्याख्यानों को सुनने वालों से प्राप्त हुए शुल्क से किया। उस प्रयोगशाला के बारे में टिप्पणी करते हुए कालेज की पत्रिका ज़ेविरियन (भाग–1, संख्या 2, सन् 1904, पृष्ठ 613) ने लिखा : ''प्रयोगशाला में प्रवेश करते ही आगंतुकों को उसके विशाल कक्ष के अलावा जो पहली चीज प्रभावित करती है, वह यह है कि उस स्थान को उपकरणों से भरी आलमरियों की शानदार कतारों ने घेर रखा है। वह जैसे–जैसे कक्ष में आगे बढ़ता जाता है, वैसे–वैसे उनकी संख्या, आयामों और महत्व का स्तर बढ़ता नजर आता है। यह स्थान व्यक्ति को अवाक् कर देता है...... वैज्ञानिक उपकरणों के मामले में प्रयोगशाला पूरी तरह अधुनातन स्तर की है। कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा नियुक्त निरीक्षकों के शब्दों में : ''इसके उपकरणों का संग्रह..... किसी भी सामान्य विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम की वास्तविक आवश्यकताओं के स्तर से ऊंचा है।''

सन् 1875 में उन्होंने कालेज में छोटी सी खगोलीय वेधशाला का निर्माण किया। इससे विज्ञान–संबंधी मामलों में लोगों की रुचि काफी बढ़ गई। उस प्रयोगशाला का निर्माण इटली के खगोल विज्ञानी पिएत्रो ताचिनी (1838–1905) की प्रेरणा से फादर लाफों ने प्रभावित होकर किया था। ताचिनी दिसम्बर 1874 में शुक्र के पारगमन का प्रेक्षण करने के लिए, इटली के एक अभियान दल के नेता के रूप में भारत आए थे। अभियान दल में उनके अलावा कालेजिओ रोमैनो वेधशाला के निदेशक जेसुइट एंजेलो सेची (सन् 1818–78), ट्यूरिन वेधशाला के अलेसैंड्रो डोर्ना (सन् 1825–86), और पडुआ वेधशाला के एंटोनिओ एबेटी (सन् 1846–1928) शामिल थे। भारत में कलकत्ता स्थित इटली के काउंसलर एफ लैमाराउक्स की सलाह पर ताचिनी ने अपने प्रेक्षण के लिए मधुपुर का चयन किया। ताचिनी के लिए प्रेक्षण स्थल का चुनाव करने के लिए लैमाराउक्स ने लाफों से सलाह ली थी। उन्हें अभियान में शामिल होने के लिए भी आमंत्रित किया गया था। अभियान दल के सदस्य के रूप में लाफों ने प्रोफेसर डोर्ना के साथ खगोलीय दृश्यों का चाक्षुष–प्रेक्षण किया। स्पेक्ट्रमी प्रेक्षण प्रोफेसर ताचिनी और एबेटी ने किए। मौसम द्वारा उपस्थित बाधाओं के बावजूद प्रो. ताचिनी की टीम ने महत्वपूर्ण परिणाम हासिल किए। फादर लाफों ने उस

अभियान का एक रोचक ब्योरा तैयार कर प्रकाशित किया। यहां उस विवरण का एक अंश प्रस्तुत है : ''प्रथम संपर्क का संभावित समय जैसे–जैसे करीब आता गया, वैसे–वैसे सूरज के चारों ओर और अधिक बादल जमा होते गए, मानो वे उसे छिपा लेने के लिए कृतसंकल्प हों। इन अवांक्षित पर्दों के बीच की बची खुची जगह से इसके (शुक्र के) चमकीले किनारों को देख पाना हमारे लिए काफी कठिन था। इसके बावजूद मुझे और प्रोफेसर डोर्ना को दोनों शुरुआती संपर्कों का करीब–करीब सटीक प्रेक्षण करने में सफलता मिल गई। स्पेक्ट्रमी पद्धति को समझने वाले अनुमान लगा चुके होंगे कि हमारे प्रतिभाशाली मुखिया और उनके सहयोगी पारगमन के इन दोनों चरणों को नहीं देख सके क्योंकि इस तरह के सूक्ष्म प्रकृति के अनुसंधानों के लिए वातावरण का बिल्कुल साफ होना एक अनिवार्य शर्त है। सौभाग्य से उसके ठीक बाद आकाश अपेक्षाकृत साफ हो गया, और पारगमन के दौरान प्रो. ताचिनी ने शुक्र के वातावरण में जल वाष्प की उपस्थिति के असंदिग्ध चिन्हों को ढूंढ़ निकाला। प्रो. एबेटी द्वारा और अधिक संपुष्ट किया गया यह निष्कर्ष ग्रहों से संबंधित हमारी जानकारी में महत्वपूर्ण योगदान था। इस अनपेक्षित खोज और वातावरण की बेहतर अवस्था से उत्साहित होकर हम सब अपने उपकरणों के नेत्र–कोटरों पर फिर से काबिज हो गए, और इस बार दोनों अंतिम संपर्कों को पूरे संतोषजनक ढंग से देख पाने में सफल रहे। इस बार भी हमने प्रेक्षण की सामान्य विधि के जरिए समय का लगभग सटीक मापन किया। उधर वर्णक्रममापी पर प्रेक्षण कर रहे हमारे सहयोगियों को संपर्क का वास्तविक समय निर्धारित करने के लिए अन्य सभी पद्धतियों की अपेक्षा वर्णक्रममापी पद्धति के अति श्रेष्ठ होने का प्रायोगिक प्रमाण प्राप्त करने का सुअवसर मिला और उन्होंने संपर्क के वास्तविक समय का सेकंड के अंशों में आसानी के साथ बिल्कुल सटीक मापन किया। अतः इस अभियान का मुख्य उद्देश्य पूरा हो गया।''

ताचिनी शुक्र के पारगमन का प्रेक्षण करके भारत से तत्काल रवाना नही हुआ। दरअसल उन्हीं दिनों पूर्ण सूर्यग्रहण लगने वाला था, जिसके निकोबार द्वीप समूह से दिखाई देने की संभावना थी। लंदन की रॉयल एस्ट्रोनॉमिकल सोसाइटी ने ताचिनी को उस सूर्यग्रहण के प्रेक्षण के लिए आयोजित अभियान में सम्मिलित होने के लिए आमंत्रित किया था। भारत में अपने प्रवास की अवधि के दौरान ही ताचिनी ने उस शोध परियोजना को मूर्त रूप देने का निर्णय किया, जिसके बारे में वह काफी दिनों से सोच रहा था। उसने सन् 1871 में 'इटैलियन स्पैक्ट्रोस्कोपिस्ट सोसाइटी' (सोसाइटा डेजिल स्पेक्ट्रोस्कोपिस्टी इटैलिआनी) की स्थान की। वह ऐसी पहली वैज्ञानिक संस्था थी, जिसकी स्थापना पूरी तरह खगोलीय स्पेक्ट्रमी, अथवा भौतिक खगोल विज्ञान से जुड़े हुए उद्देश्यों के लिए की गई थी। सोसाइटी में सेची, गिउसिप लोरेंजोनी, लोरेंजो रेस्पिगी (सन् 1824–1889) और अर्मिनिओ नोबाइल (सन् 1838–97) शामिल थे। उसका पहला प्रमुख उद्देश्य सौर लक्षणों का निरंतर अध्ययन और परीक्षण करना था। इसके लिए उन्होंने ऐसी वेधशाला की आवश्यकता महसूस की, जो किसी अन्य देश में स्थापित हो। ताचिनी ने अनुभव किया कि इस तरह की वेधशाला यदि भारत में स्थापित की जाय तो वह उनके उद्देश्यों में काफी सहायक होगी। इस संबंध में ताचिनी ने लिखा है : ''मधुपुर में प्रवास के दौरान हमें सौर अवयवों के प्रेक्षण की एक पूरी श्रृंखला के लिए अत्यधिक अनुकूल मौसमी स्थितियां ऐसे मौसम में मिलीं, जिसमें पालेर्मो एवं इटली के अन्य कस्बों में सफल प्रेक्षण कर पाना कदाचित् ही संभव होता है। इससे हमें मेरे एवं सेची द्वारा बीते सालों में व्यक्त की गई उस आवश्यकता की याद आ गई कि किसी अन्य देश में एक ऐसी वेधशाला होनी चाहिए, जिसका उपयोग हम अपने प्रेक्षणों की श्रृंखला को पूरा करने के लिए कर सकें, क्योंकि हमारी वेधशालाओं में उन्हें जाड़े के मौसम, विशेषकर नवंबर से मार्च के बीच स्थगित कर देना पड़ता है।''

जुलाई 1875 में लाफों ने ताचिनी को लिखा : ''मुझे आपको यह बताते हुए हर्ष हो रहा है कि हमारी वेधशाला करीब–करीब स्थापित हो चुकी है (.........)। श्री मेर्ज़ मुझे इस बारे में लिख चुके हैं कि वह 12,500 फ्रांक मूल्य के एक दिग्भेदीय क्षमता वाले विषुवतीय यंत्र का निर्माण कर रहे हैं। यह कम से कम 18 महीने में तैयार होगा। इस बीच मुझे एक 10 प्रिज्मों वाला वर्णक्रममापी प्राप्त होने वाला है। अपने शानदार उपकरण की स्थापना की प्रतीक्षा की अवधि में मैं उसका (वर्णक्रममापी का) उपयोग स्टेनहील के एक छोटे से तीन इंचीय दूरदर्शी के साथ करूंगा।''

ताचिनी ने वैज्ञानिक समुदाय के समक्ष कलकत्ता की वर्णक्रमी वेधशाला की स्थापना की घोषणा इन शब्दों में की : ''मधुपुर में स्थापित हमारे उपकरणों से वर्णमंडल और सौर ज्वालाओं का प्रेक्षण करने तथा हमारे केन्द्र में सूर्य के वर्णक्रमी प्रेक्षण की व्यावहारिक विधि को देखने के बाद सेंट जेवियर्स कालेज, कलकत्ता के निदेशक और लब्धप्रतिष्ठ व्यक्तित्व फादर लाफों ने सौर–प्रेक्षणों को नियमित रूप से जारी रखने के लिए कलकत्ता स्थित अपने कालेज में एक वेधशाला की स्थापना का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है, इससे (......) हमारे प्रेक्षणों में (जाड़े के) महीनों के दौरान आकाश के अत्यधिक बादल भरे होने के कारण अनिवार्य रूप से उत्पन्न होने वाले अंतराल को भरा जा सकेगा (.....)। उस केन्द्र के निर्माण का कार्य लगभग पूरा हो चुका है.... हमें आशा है कि लाफों के सक्रिय निर्देशन में कलकत्ता स्थित वेधशाला श्रेष्ठतम परिणाम दे सकने में सक्षम होगी। उन्होंने अपनी योग्यता और प्रतिबद्धता के बल पर एक लम्बे समय से उपस्थित बाधा को दूर किया है। अतः हमारे सहयोगी उनके अत्यंत आभारी रहेंगे।''

सेंट जेवियर कालेज की उन्नीसवीं सदी की वेधशाला

उस वेधशाला के निर्माण के लिए धन कैसे प्राप्त हुआ, इसके बारे में सेंट जेवियर्स कॉलेज की पत्रिका ज़ेविरियन ने लिखा था : इटली के खगोलविज्ञानी प्रोफेसर ताचिनी दिसम्बर, 1874 में भारत की अपनी संक्षिप्त यात्रा के दौरान यहां के बादलरहित आकाश में किए गए महत्वपूर्ण सौर परीक्षणों से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने फादर लाफों को सेंट ज़ेवियर्स कालेज में एक वर्णक्रम दूरदर्शी की स्थापना के लिए प्रेरित किया। धन जुटाने के लिए एक अपील जारी की गई। लेफ्टिनेंट गवर्नर सर रिचर्ड टेंचल ने इसमें व्यक्तिगत तौर पर रुचि ली। एक दिन अपराह्न में उन्होंने कॉलेज का दौरा किया..... उसी महीने के अंत में बंगाल सरकार ने वेधशाला की स्थापना के लिए 5000 रुपए का अनुदान स्वीकृत किया, पर उसके साथ में यह शर्त भी रखी कि मार्च के अंत तक उतनी ही राशि लोगों से चंदा प्राप्त करके जुटा ली जाए। धन की व्यवस्था जल्दी ही हो गई..... जून 1875 के अंत तक प्रयोगशाला लगभग स्थापित हो चुकी थी। एक आकलन के अनुसार, उसे स्थापित करने में लगभग 9000 रुपए लगे थे। इसके अलावा मयुनिख़ और लंदन से भी उपकरण मंगवाए गए थे। जिनकी लागत को शामिल करके वेधशाला की स्थापना पर 15,900 रुपए व्यय हुए। सरकार ने मूल रूप से दिए गए अपने अनुदान की राशि बढ़ाकर 2000 रुपए कर दी। कलकत्ता के व्यापारी समुदाय ने उदारतापूर्वक शेष राशि की व्यवस्था की। फादर लाफों ने कुल 21,000 रुपए एकत्र किए। इस परियोजना के लिए एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल ने प्रतीकात्मक अनुदान दिया।'' इस गतिविधि का उल्लेख प्रसिद्ध अंतर्राष्ट्रीय जर्नल नेचर ने भी किया। रसायनज्ञ रैफेल मेडोला (सन् 1849–1915) द्वारा हस्ताक्षरित एक रिपोर्ट में लिखा गया था : ''चूंकि अब वैज्ञानिक समुदाय द्वारा भारत में सौर–परीक्षण के विषय पर ध्यान दिए जाने की संभावना है, अतः नेचर के पाठकों के लिए कलकत्ता में निर्मित की जाने वाली इस

वेधशाला से संबंधित विवरण उपयोगी होगा। इस संबंध में पहला सुझाव प्रसिद्ध खगोलविज्ञानी और वर्णक्रम विशेषज्ञ प्रो. ताचिनी ने दिया था, जिन्हें वहां इटली की सरकार ने शुक्र के पारगमन–प्रेक्षण–अभियान के निदेशक के रूप में भेजा था। उनके सुझाव को सेंट ज़ेवियर्स कॉलेज के प्रिंसिपल पिएरे लाफों ने फौरन स्वीकार कर लिया..... इस प्रकार शुक्र के पारगमन को प्रेक्षित करने वाला अभियान उन बीजों को रोपने का माध्यम बना, जिन्हें अपने विकास के लिए अत्यधिक अनुकूल भूमि मिली है। उनकी संख्या भले ही गिनी–चुनी है, पर जल्दी ही वे ऐसे फल देंगे, जिनका वैज्ञानिक समुदाय के लिए अत्यधिक महत्व होगा (....)। यह सूर्य की संरचना और संगठन में होने वाले आवर्ती परिवर्तनों को एक सार्वजनिक उद्यम के माध्यम से सुव्यवस्थित ढंग से प्रेक्षित करने का प्रयास है, जिसे निर्देशित कर पाना हमारे लिए संभव नहीं है।''

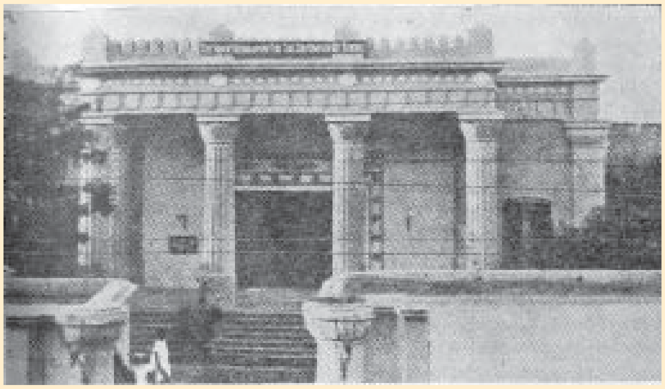

इंडियन एसोसिएशन फॉर द कल्टीवेशन ऑफ साइंस, 210, बाउ बाजार स्ट्रीट कोलकाता

सन् 1876 में इंडियन एसोसिएशन फॉर द कल्टिवेशन ऑफ साइंस की स्थापना इस उद्देश्य से की गई ताकि ''भारत के निवासी मौलिक अनुसंधान के जरिए विज्ञान के सभी क्षेत्रों का विकास कर सकें और जीवन को सुविधासंपन्न एवं लालित्यपूर्ण बनाने के लिए इसका विविध प्रकार से उपयोग कर सकें (और ऐसा अनिवार्यतः होगा)।'' लोगों में विज्ञान–संबंधी रुचि जागृत करने और वैज्ञानिकों को मौलिक शोध का प्रशिक्षण देने के लिए इस प्रकार की संस्था की स्थापना का प्रस्ताव सबसे पहले महेन्द्रलाल सरकार ने रखा था। इस संस्था में काम करते हुए ही सी.वी. रमन विज्ञान का नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले प्रथम भारतीय वैज्ञानिक बने। फादर लाफों ने न केवल महेन्द्र लाल सरकार की योजना को मुक्त हृदय से समर्थन दिया, बल्कि कई तरीकों से एसोसिएशन की स्थापना में सहायता भी दी। वह एसोसिएशन के गठन की योजना बनाने के लिए नियुक्त की गई तदर्थ समिति के अध्यक्ष बने। 15 जनवरी, 1876 को एसोसिएशन पूरी तरह गठित कर दी गई। एसोसिएशन ने गठन के बाद जल्दी ही शिक्षण का कार्य शुरू कर दिया और इसके लिए फादर लाफों और डा. सरकार को भौतिकी का तथा डा. कांतिलाल डे को रसायन शास्त्र का मानद प्रवक्ता नियुक्त किया गया। फादर लाफों ने अपने पाठ्यक्रम की शुरुआत 24 अगस्त, 1876 से की। उन्होंने प्रकाश, सामान्य भौतिकी और ध्वनि के बारे में व्याख्यान दिए। हर साल उन्होंने औसतन 20 से 30 व्याख्यान दिए। एसोसिएशन में नियमित रूप से व्याख्यान देने का उनका यह क्रम सन् 1893 तक जारी रहा, पर विज्ञान संबंधी जन उपयोगी विषयों पर एसोसिएशन में उनके यदा–कदा व्याख्यान देते रहने का सिलसिला बाद में भी जारी रहा। वह उसकी वार्षिक बैठकों में भी भाग लेते रहे। एसोसिएशन में उन्होंने अपना अंतिम भाषण 21 नवंबर 1907 को दिया। वह एसोसिएशन के 30वीं वार्षिक बैठक के आयोजन का अवसर था। उस बैठक में दिए गए अपने भाषण में उन्होंने इस विचार का समर्थन किया कि एसोसिएशन को शिक्षण के क्षेत्र से हटकर मौलिक अनुसंधानों पर ध्यान देना चाहिए। उन्होंने छात्रों को 'अपनी समस्त क्षमताओं का संपूर्ण और सामंजस्यपूर्ण विकास करने के लिए' प्रेरित किया। उनका कहना था : ''समस्त सिद्धांतों और मात्र कामचलाऊ परिकल्पनाओं को परम सत्य के रूप में स्वीकार करते समय सावधान रहना चाहिए। यहां तक कि विलक्षण परिणाम देने वाला हमारा प्रिय परमाणु सिद्धांत भी पदार्थ की नई अवधारणाओं के विकसित होने के कारण अप्रासंगिक हो सकता है। रेडियम और अन्य विकिरणशील पदार्थों के बारे में हुई खोजों के कारण हमें इस तरह के अनुमानों के बारे में अति सतर्क हो जाना चाहिए कि हम पदार्थ की संरचना और व्यापक प्रकृति के बारे में किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुंच चुके हैं। सब कुछ जानने का फूहड़ स्वांग रचने के बजाय यदि आपको यह कहना आता है कि मुझे नहीं मालूम है, तो वह अधिक अच्छी बात है।'' एसोसिएशन की बैठकों में फादर लाफों के सम्मिलित होने का वह अंतिम अवसर था। उसमें सी.वी. रमन भी उपस्थित थे। एसोसिएशन की वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए अमृत लाल सरकार ने रमन द्वारा एसोसिएशन में शोध कार्य किए जाने का उल्लेख किया। उन्होंने कहा : ''मुझे आपके सामने यह घोषणा करते हुए हर्ष का अनुभव हो रहा है कि एक कुशाग्र बुद्धि का युवा छात्र हमारी प्रयोगशाला में भौतिक प्रकाशिकी पर अनुसंधान कर रहा है, और उसके कार्य के एक अन्य पहलू से संबंधित उसका लेख नेचर के 24 अक्टूबर, सन् 1907 के अंक में प्रकाशित हुआ है। उसके द्वारा किए जा रहे वास्तविक कार्य का ब्योरा आपके सामने एक बैठक में शीघ्र ही प्रस्तुत किया जाएगा। सी.वी. रमन नाम का यह युवा छात्र, जो हमारा सदस्य भी बन चुका है, अपनी आजीविका के लिए वित्त विभाग में कार्य कर रहा है.....।'' इस तरह फादर लाफों को भारत के भावी नोबेल पुरस्कार विजेता का स्वागत करने तथा उन्हें प्रोत्साहित करने का अवसर मिला। एसोसिएशन की स्थापना में अपनी भूमिका के बारे में फादर लाफों ने कहा : ''..... मेरा मानना है कि मुझे एसोसिएशन की स्थापना में विनम्र सहयोग देने का जो अवसर मिला, वह भारत में मेरे द्वारा किया गया सर्वश्रेष्ठ कार्य है।''

डॉ. अमृतलाल सरकार, जो कि इंडियन एसोसिएशन फॉद दि कल्टीवेशन ऑस साइंस के सचिव बने

फादर लाफों का वक्तृत्व कौशल लोक प्रसिद्ध था। वह अपने व्याख्यानों के साथ प्रायोगिक प्रदर्शन भी करते थे। पंजाब में विज्ञान के लोकप्रियकरण में अग्रणी भूमिका निभाने वाले रुचिराम साहनी ने इस बारे में लिखा है : ''डॉ. महेंद्र लाल सरकार के संस्थान में जन–उपयोगी विज्ञान के संबंध में दिए जाने वाले व्याख्यानों को नियमित रूप से सुनने से मुझे कम लाभ नहीं हुआ। इन व्याख्यानों ने ही मुझे और प्रो. ओमान को लाहौर में पंजाब साइंस इंस्टीट्यूट की स्थापना के लिए प्रेरित किया। मैं सेंट जेवियर्स कॉलेज के फादर ई. लाफों द्वारा जन उपयोगी विज्ञान के बारे में दिए गए भाषणों को कभी नहीं भूल सकता। मंच पर अन्य वक्ता भी उपस्थित होते रहते थे, पर किसी कठिन मुद्दे को पूरी तरह स्पष्ट करने और खासतौर पर विज्ञान में लोगों की रुचि जागृत करने में जेस्यूइट प्रोफेसर का कोई मुकाबला नहीं कर सकता था।'' सेंट जेवियर्स कालेज में फादर लाफों द्वारा दिए गए व्याख्यानों पर टिप्पणी करते हुए *'दि इंडो–यूरोपियन करेसपांडेंस'* ने अपने 14 मई, 1870 के अंक में लिखा : ''अत्यधिक गर्मी और शहर के उत्तरी भाग से सेंट जेवियर्स कॉलेज के काफी दूर होने के बावजूद पांच तारीख, (पांच मई, 1870) को बृहस्पतिवार के दिन भौतिक विज्ञान के बारे में फादर लाफों के प्रथम

भाषण को सुनने के लिए लोग काफी संख्या में उपस्थित हुए। इस अवसर पर कई प्रतिष्ठित स्थानीय विद्वान भी उपस्थित थे, अतः उन्होंने आडंबर और अनावश्यक जटिलताओं को अपनाए बिना हर बात को बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से व्यक्त किया। वस्तुतः यदि *'हिंदू पेट्रिअट'* समाचार पत्र के शब्दों में कहा जाय तो ''उन्होंने ऐसे एक भी तकनीकी शब्द या वाक्यांश का प्रयोग नहीं किया, जिसे अंग्रेजी का कोई सामान्य छात्र न समझ सकता हो।'' फैराडे और ब्रैंड ने लंदन के रॉयल इंस्टीट्यूट में दिए गए अपने भाषणों में यही विधि अपनाई थी, और चूंकि लंदन में यह न केवल उपयोगी बल्कि आकर्षक भी सिद्ध हो चुकी है, अतः कलकत्ता में इसके असफल होने का कोई कारण नहीं दिखता।'' इसी तरह 'दि स्टेट्समैन' ने 26 अगस्त, 1887 के अंक में फादर लाफों द्वारा 23 अगस्त 1887 को दिए गए जन–उपयोगी विज्ञान–संबंधी व्याख्यान पर यह टिप्पणी की : ''सम्माननीय फादर लाफों ने डलहौजी इंस्टीट्यूट में मंगलवार की रात में संभ्रांत पुरुषों एवं महिलाओं की अच्छी–खासी संख्या के समक्ष 'रंग क्या है' विषय के बारे में एक अत्यंत रुचिकर एवं शिक्षाप्रद व्याख्यान दिया। यद्यपि उनकी व्याख्याएं अनिवार्य रूप से मुख्यतः वैज्ञानिक प्रकृति की थीं, इसके बावजूद वे सामान्य लोगों की समझ में आईं और साधारण बुद्धि वाला कोई भी व्यक्ति उनके व्याख्यान को समझ सकता था। व्याख्यान में प्रस्तुत मुद्दों के विभिन्न प्रकार के प्रायोगिक उदाहरण प्रस्तुत किए गए थे, जो यह दर्शाते थे कि सूर्य की किरणों में समस्त रंग उपस्थित हैं। प्रिज्म से गुजरने पर अपवर्तन की क्रिया के कारण ये विभेदित हो जाते हैं और उन्हें इंद्रधनुष की भांति अलग–अलग देखा जा सकता है पर जब वे मनुष्य के नेत्रों की रेटिना से टकराती हैं, तो सूर्य के सामान्य श्वेत प्रकाश का सृजन करती हैं। व्याख्यान में वर्णांधता का कारण भी बताया गया। उन्होंने मैगनेशियम की रोशनी का प्रदर्शन किया, और सोडियम नामक एक धातु से भी प्रकाश सृजित किया जिसके प्रभाव के कारण हर रंग की वस्तु पीली दिखाई देती है। वह एक काफी सुहानी शाम थी।''

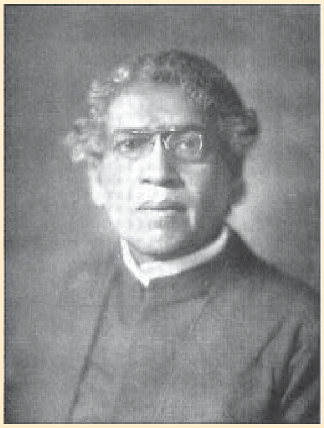

जगदीश चन्द्र बोस

फादर लाफों ने अनेक विषयों पर व्याख्यान दिए। यहां हम उनके व्याख्यान के विषयों की सूची प्रस्तुत कर रहे हैं – डाल्टन का परमाणु सिद्धांत (19 मई, 1810); वर्णक्रम विश्लेषण का भौतिक आधार : इंडियन मिरर में प्रकाशित टिप्पणी (11 अप्रैल, 1872); विद्युत : राजेंद्र लाल मित्रा की टिप्पणी (10 अप्रैल, 1876); गैलीलियो की भर्त्सना से संबंधित सत्य (23 जून, 1881); हम जिस हवा से सांस लेते हैं – उसके गुण–धर्म (19 जनवरी, 1882); लेंस (30 मार्च, 1882); भौतिक शक्तियों का रूपांतरण (20 दिसम्बर, 1882); गैसों के गुणधर्म (12 नवम्बर, 1885); बैरोमीटर (19 नवम्बर, 1885); बैरोमीटर और बैरोमेट्रोग्राफ्स (26 नवम्बर, 1885); गुब्बारे (14 जनवरी, 1886); प्रारंभिक ध्वनि विज्ञान (21 जनवरी, 1886); संगीतमय ध्वनि के तीन गुण (11 फरवरी, 1886); एडिसन के बोल सकने वाले फोनोग्राफ का इतिहास और उसकी क्षमताएं, उदाहरणों और प्रयोगों के साथ (15 जुलाई, 1886), प्रकाश की गति और उसको मापने के साधन (26 अगस्त, 1886), प्रकाश का परावर्तन (8 सितंबर, 1886); प्रकाश का अपवर्तन (17 नवंबर, 1886); द्रवों की साम्यावस्था (6 सितम्बर, 1887); मनुष्य के नेत्र (25 सितंबर, 1888); जीरोस्को पर गति (22 जनवरी, 1891); रासायनिक विश्लेषण की सामान्य विधियां (22 जनवरी, 1891); प्रेरक कुंडली में विद्युत् धारा के तीव्र परिवर्तन का प्रभाव (6 सितंबर 1893); एक्स किरण, रोंटेजेन किरणें (6 दिसम्बर, 1896); तारविहीन टेलीग्राफी – इस व्याख्यान में उनके पूर्व छात्र जगदीश चन्द्र बोस ने भी उनकी सहायता की (16 सितंबर, 1897); प्रेरित विद्युत धारा का विकास – इसका प्रदर्शन पेरिस से आयातित नवीनतम उपकरणों की सहायता से किया गया; रेडियोधर्मिता की परिघटना (नवम्बर, 1907)। लाफों ने ग्रामोफोन के प्रदर्शन से संबंधित अपना अंतिम व्याख्यान मृत्यु से चार दिन पूर्व दिया था।

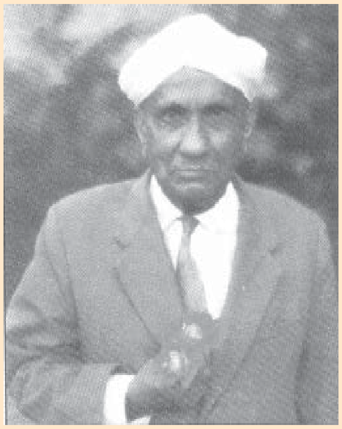

चन्द्रशेखर वेंकट रमन

फादर लाफों की किसी भी तरह की नई मशीन, या प्रयोग में गहरी रुचि थी। वह दिसम्बर 1878 में पेरिस में लगी प्रदर्शनी से एक फोनोग्राफ लाए और उस पर प्रयोग किए। उन्होंने 15 जुलाई, 1886 को फोनोग्राफ के बारे में व्याख्यान भी दिया। बाद में वह ग्रामोफोन कंपनी ऑफ यू.एस. ए. से एक और फोनोग्राफ ले आए। फादर लाफों ने सन् 1889–90 में कोलकाता में किए गए गुब्बारे के आरोहण से संबंधित प्रयोगों (विशेष रूप से वैज्ञानिक उद्देश्य से किए गए प्रयोगों) का काफी सूक्ष्मता से प्रेक्षण किया।

फादर लाफों प्रकृति को समझने और मानवता के कल्याण के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी को विकसित करने के पक्षधर थे। 29 नवंबर 1906 को इंडियन एसोसिएशन फार द कल्टिवेशन ऑफ साइंस की वार्षिक बैठक में उन्होंने कहा : ''इसमें दो राय नहीं कि हम एक ऐसे युग में जी रहे हैं, जो अपनी उपलब्धियों पर गर्व कर सकता है। पिछली सदी और इस सदी के कुछ बीते वर्षों ने मानव इतिहास के एक ऐसे युग का निर्माण किया है, जो प्रगति की दृष्टि से असाधारण है। किसी भी सदी ने उस ढंग की प्रगति नहीं देखी, जैसी कि पिछली सदी में देखी गई और प्रकृति पर मनुष्य ने काफी तेजी से असीमित अधिकार कायम कर लिया है तथा उल्लेखनीय तथ्य यह है कि हम जितनीअधिक खोजें करते हैं, हमारी अपेक्षा उतनी ही बढ़ती जाती हैं..... हमें सत्य संबंधी अपने ज्ञान में से केवल तथ्यों को संजोना चाहिए, मनोभावों, कल्पनाओं और सपनों को नहीं, केवल तथ्यों को। प्रेक्षणों और प्रयोगों के माध्यम से उपलब्ध अधिकाधिक तथ्यों को संजोकर हमने उनकी तुलना और विश्लेषण करने का वह तरीका सीखा जिसके जरिए हम उस नियम को ढूढ़ सकते हैं, जो तथ्यों की विशाल श्रृंखला को तर्कसंगत और युक्तिसंगत ढंग से जोड़ता है। लेकिन एक धार्मिक व्यक्ति होने के कारण वह केवल भौतिक संसार को समझने से संतुष्ट नहीं थे, अतः उन्होंने आगे कहा : ''हम प्रकृति के नियमों को ढूढ़ने की कोशिश करते हैं और बहुधा सफल भी होते हैं। यह सोचना पूरी तरह गलत है कि वैज्ञानिक खोजों और अध्ययन से संबंधित विलक्षण विधियों का संबंध केवल पदार्थ के अलावा अन्य किसी चीज से नहीं है। याद रखिए, 19वीं सदी में मानव मस्तिष्क ने जो भी प्रगति की है और जिस पर हम उचित ढंग गर्व करते हैं, वह केवल पदार्थ तक सीमित है। अब यह दावा कौन कर सकता है कि इस संसार में पदार्थ के अलावा और कुछ भी जानने योग्य नहीं है? यदि प्रायोगिक विज्ञान में दक्ष मनुष्य पूरी तरह भौतिकवादी होकर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि विश्व में पदार्थ के अलावा और किसी चीज का अस्तित्व नहीं है तो यह खेद का विषय होगा।''

फादर लाफों ने चर्च द्वारा गैलीलियो की भर्त्सना किए जाने को उचित या तर्कसंगत ठहराने का प्रयास किया। इसके लिए उन्होंने तत्कालीन परिस्थितियों और गैलीलियो के रवैए का हवाला दिया। इंडियन एसोसिएशन ऑफ कल्टिवेशन ऑफ साइंस में 23 जून, 1881 को ''गैलीलियो की भर्त्सना से संबंधित सत्य शीर्षक'' के अपने एक व्याख्यान में उन्होंने कहा : ''एक पल के लिए भी यह मत सोचिए कि मैं दंडाज्ञा से संबंधित तथ्यों को झुठलाना चाहता हूं, उसके विपरीत मेरे पास उस दंडाज्ञा का मूल पाठ है (पढ़कर सुनाता हूं), और मैं स्पष्ट तौर पर स्वीकार करता हूं कि धर्ममंडल ने पृथ्वी की परिक्रमा से संबंधित कोपर्निकस की प्रणाली की बेहद कड़े शब्दों में भर्त्सना की।

इंडियन एसोसिएशन फॉर दि कल्टीवेशन ऑफ
साइंस का नया परिसर

लेकिन मैं इस आरोप का प्रतिवाद जरूर करना चाहूंगा कि ऐसा करके उन्होंने उस वृद्ध खगोल विज्ञानी के प्रति क्रूरता बरती और अपने मन में विज्ञान के प्रति गुप्त ढंग से पल रही घृणा का प्रदर्शन किया अथवा कैथोलिक चर्च को अकाट्य सिद्ध करने की गलती करके वादनीयली का परिचय दिया। .....19वीं सदी में जब हमारे पास सारे तथ्य और प्रणालियां उपलब्ध हैं, तो उन अभियोजकों की सरलता और अज्ञानता पर हंसना आसान है लेकिन हमें उनके वक्त के हालातों को महसूस करना चाहिए और समझना चाहिए कि उन्हें कितने अपर्याप्त प्रमाणों के आधार पर एक ऐसी परिकल्पना के बारे में निर्णय देना था, जिसने धर्मग्रंथों की एक सर्वस्वीकृत व्याख्या को ध्वस्त कर दिया था। हम यहां केवल इतना कह सकते हैं कि यदि गैलीलियो ने धर्म–विज्ञान के क्षेत्र में अतिक्रमण करने के बजाय अपनी प्रतिभा और कार्यक्षमता–संबंधी ऊर्जा को गतिशीलता के नियमों से संबंधित ज्ञान को परिपूर्ण बनाने तक सीमित रखा होता तो उस पर आंच नहीं आती और वह विज्ञान की प्रगति में और सहायक बना होता पर उसकी अविवेकपूर्ण प्रचंडता के कारण ऐसा नहीं हो सका।

10 मई, 1908 को पं. बंगाल के दार्जिलिंग नामक स्थान पर लाफों का निधन हो गया। वह अपने जीवन के अंतिम समय तक धर्म और विज्ञान की शिक्षा समान सफलता के साथ देते रहे।

विस्तृत जानकारी के लिए पढ़ें :

1. अरुण कुमार बिस्वास, *फादर लाफों ऑफ सेंट जेवियर्स कॉलेज एंड द कंटेपररी साइंस मूवमेंट*, कोलकाता। द एशियाटिक सोसाइटी, 2001, विज्ञान एवं धर्म के क्षेत्र में फादर लाफों द्वारा दिए गए योगदान का यह पहला समालोचनात्मक मूल्यांकन है।
2. गेडिसि, पैट्रिक, *ऐन इंडियन पायनियर ऑफ साइंस : द लाइफ एंड वर्क ऑफ सर जगदीश सी. बोस*, लंदन, लांगमैन, ग्रीन एंड कंपनी, सन् 1920 (एशियन एजुकेशनल सर्विसेज, नई दिल्ली ने इसे पुनर्मुद्रित किया है)।
3. दासगुप्ता, सुब्रत, *जगदीश चन्द्र बोस एंड द इंडियन रिस्पांस टु वेस्टर्न साइंस*, नई दिल्ली, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, सन् 1949।
4. सहगल नरेंद्र के. और सुबोध महंती (संपादक), *मेमॉयर्स ऑफ रुचिराम साहनी : पायनियर ऑफ साइंस पापुलराइजेशन इन पंजाब*, नई दिल्ली, विज्ञान प्रसार, सन् 1994 (न्यू एज इंटरनेशनल, नई दिल्ली द्वारा वितरित)।
5. सेंचुरी, कोलकाता, *इंडियन एसोसिएशन फॉर द कल्टिवेशन ऑफ साइंस*, सन् 1976।
6. साल्वी दिलीप, एम, *जगदीश चन्द्र बोस : द फर्स्ट मार्डन साइंटिस्ट* नई दिल्ली, रूपा एंड कंपनी, सन् 2002।
7. चिनिकि इलेना, *''ऐन इटैलियन ऑबजर्वेटरी इन इंडिया : द हिस्ट्री ऑफ द कैलकटा आब्जर्वेटरी''*, खंड 1, संख्या 1–2, नई सीरिज (सन् 1995–96), पृष्ठ 91–115।
8. स्कोलबर्ग, हेनरी (संपादक), द *बॉयग्रॉफिकल डिक्शनरी ऑफ ग्रेटर इंडिया*, नई दिल्ली, प्रोमिला एंड कंपनी पब्लिशर्स, सन् 1998।

ʋ ʋ ʋ

फार्म IV–बी (नियम 8 देखें)

मासिक पत्र 'ड्रीम 2047' के स्वामित्व और अन्य तथ्यों के संबंध में विवरण :

प्रकाशन का स्थान	:	नई दिल्ली
प्रकाशन की अवधि	:	मासिक
प्रकाशन तथा मुद्रक का नाम (विज्ञान प्रसार के लिए)	:	डा. सुबोध महंती
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	विज्ञान प्रसार सी–24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली – 110016
संपादक का नाम	:	डा. विनय बी. काम्बले
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	विज्ञान प्रसार सी–24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली – 110016
उनके नाम व पते जिनका इस पत्रिका पर स्वामित्व है	:	विज्ञान प्रसार सी–24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली – 110016

मैं, डा. सुबोध महंती, यह घोषणा करता हूं कि मेरी जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिया गया विवरण सत्य है।

डा. सुबोध महंती
(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

संपादक के नाम पत्र

विज्ञान प्रसार की मासिक पत्रिका ड्रीम 2047 बहुत ही ज्ञानवर्धक एवं रुचिपूर्ण है। इसके प्रत्येक लेख के प्रत्येक शब्द नयी वैज्ञानिक जानकारी से परिपूर्ण है। विशेषत: इसके प्रत्येक अंक संग्रहणीय भी हैं।

आत्मा राम गुप्ता
वार्ड नं. 8, मकान नं. 2, बुधनगर, पीपीगंज, गोरखपुर 273165

आपके द्वारा संपादित पत्रिका ड्रीम 2047 हर प्रकार की जानकारी के लिए अपने आप में अद्वितीय है। अन्य लेखों के अलावा 'संपादकीय' परिशिष्ट काफी ज्ञानवर्धक थे। सही अर्थों में इस पत्रिका से हमें ऐसी जानकारियां मिल जाती हैं, जो अन्यत्र मिल ही नहीं पाती हैं। पत्रिका के इस सुन्दर प्रस्तुतिकरण के लिए 'ड्रीम 2047 के सभी सदस्यों को कोटि–कोटि धन्यवाद

पंकज कुमार रोशन
ग्राम हनुमान नगर, पोस्ट–भड़वारी, वाया–मंगलगढ़, जिला–समस्तीपुर, पिन 848208, बिहार

ड्रीम 2047, जुलाई 2003 अंक में ''लौंग'' के बारे में पढ़ा। एक छोटी सी चीज, औषधीय वनस्पति जिसको हर घड़ी इस्तेमाल किया जाता है उसके गुणों की जानकारी प्राप्त हुई।

गोपाल रा. वडतकर
विज्ञान शिक्षक, तामसवाडी (इटकी), ता. दर्यापुर, जिला अमारवणी, महाराष्ट्र 444803

मासिक पत्रिका 'ड्रीम 2047' में सॉफ्टवेयर निर्माण से लेकर हल्दी की उपयोगिता को पढ़ा। पत्रिका की स्तरीयता, वैज्ञानिक शब्दावली, चिन्तन एवं प्रसार के माध्यम का सुगम वैज्ञानिक दर्शन वास्तविक और व्यवहारिक तौर पर देखा गया। विभिन्न वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य का विश्लेषण केवल ज्ञानवर्धक ही नहीं बल्कि दिशावर्धक के साथ–साथ आत्मनिर्भरता के क्षेत्र में उच्च पूंजी सावित हुआ। सबसे ज्यादा पाश्चर का योगदान विज्ञान की दुनिया के लिए मील का पत्थर साबित हुआ। सचमुच यह एतिहासिक दस्तावेज ही है।

सुनील कुमार मिश्र
समन्वयक बचपन साइंस क्लब गोगरी, खरिया

नाभिकीय अनुसंधान प्रयोगशाला

कृषि उत्पादकता की वृद्धि में संलग्न एक अंतर–शैक्षणिक केन्द्र

❑ दिलीप एम. सालवी
e-mail: dilipmsalwi@hotmail.com

आई.ए.आर.आई. परिसर, नयी दिल्ली में राष्ट्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला का भवन

डॉ. पी.एस. दत्ता, परियोजना निदेशक, नाभिकीय अनुसंधान प्रयोगशाला, नयी दिल्ली ने कहा, ''हमारे केन्द्र का प्रमुख उद्देश्य उच्चतर गुणवत्तायुक्त एवं मात्रात्मक खाद्य उत्पादन के लिए खेत में किसानों से लेकर हाइड्रोलिक इंजीनियर और कृषि उद्योगपति तक पादप कायिकी, जल पिंड मूल्यांकन, बाढ़–प्रतिरोधी युक्तियों, फसल कटाई उपरांत तकनीकों, प्राप्त परिणामों का संग्रहण एवं परितुलन और उनको उपयोक्ताओं के लिए उपलब्ध कराने से संबंधित अध्ययन संचालित करना है।'' यह कथन आज एनआरएल की प्रस्थिति का समर्थन करता है। कृषि में नाभिकीय तकनीकों का इस्तेमाल करने वाले इस राष्ट्रीय केन्द्र में किये जाने वाले अध्ययनों का आजकल सिर्फ पूरे भारत के संगठनों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा ही उपयोग नहीं किया जाता, बल्कि सम्पूर्ण विश्व विशेषकर बांग्लादेश, मंगोलिया, चीन, श्रीलंका जैसे पड़ोसी देशों और मध्य पूर्व, यूरोप एवं यूएसए द्वारा भी इनका इस्तेमाल किया जाता है। इसके अलावा एनआरएल फसलों, भू–जल और फसल कटाई उपरांत संरक्षण से संबंधित विविध नाभिकीय तकनीकों में छात्रों, कृषि विस्तार कामगारों, कृषकों, अभियंताओं, तकनीकीविदों और कृषि–औद्योगिक कामगारों को शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्रदान करने का एक प्रमुख केन्द्र है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के विस्तीर्ण, विस्तृत और शांतिपूर्ण पूसा परिसर में नाभिकीय अनुसंधान प्रयोगशाला का पता लगा पाना आसान नहीं होता, क्योंकि प्रायः लोग यह आश्चर्य करते हैं कि एक नाभिकीय प्रयोगशाला का कृषि के संबंध में क्या काम हो सकता है। आज भी प्रायः लोगों के मन में खेती की वही पुरानी छवि है, जिसके तहत कृषि अनुसंधान महज उच्च उत्पादकता वाली संकरित फसलों, अधिक प्रभावकारी उर्वरकों और कीटनाशकों तक ही सीमित होता है। अभी तक लोगों के मस्तिष्क में यह बात अपनी पैठ नहीं बना पायी है कि एक खुले खेत में बढ़ते फसलों को अकेले नहीं छोड़ा जा सकता। फसलों की उत्पादकता में मात्रात्मक एवं गुणात्मक रूप में सुधार लाने तथा बिना किसी क्षति के बाजार तक इनकी पूर्ति करने में मृदा स्थिति, मौसम, जल उपलब्धता, फसल कटाई पश्चात् संरक्षण के मामले में अभी काफी लम्बी दूरी तय करनी है। इस प्रयास में नाभिकीय तकनीकें कृषक को सहायता प्रदान कर सकती हैं। एनआरएल की स्थापना 1969 में इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर संयुक्त रूप से संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, खाद्य व कृषि संगठन तथा अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा अभिकरण द्वारा कृषि कार्यक्रम में नाभिकीय अनुसंधान के शांतिपूर्ण इस्तेमाल के तहत एक बहु–शैक्षणिक केन्द्र के रूप में की गयी।

जल एवं पौध ऊतकों में ऑक्सीजनयुक्त समस्थानिक संघटन के निर्धारण के लिए एनआरएल में प्रीपरेशन लाइन

प्रारंभ में एनआरएल की स्थापना सस्यविज्ञान विभाग के पीछे एक गौशाला में हुई। इस प्रयोगशाला की स्थापना, यहां तक कि उसके भवन की डिजाइन के पीछे एनआरएल के प्रथम परियोजना निदेशक डॉ. एन.पी. दत्ता का दिमाग था।

उस समय यह विश्व में कहीं भी उपलब्ध सर्वाधिक परिष्कृत उपकरण एवं यंत्रों से सुसज्जित था। उदाहरणार्थ, इसमें समस्थानिक अनुपात द्रव्यमान स्पेक्ट्रोमीटर, नाभिकीय चुम्बकीय अनुनाद, द्रव प्रस्फुरण प्रणाली, ई–एमिशन एनालाइजर, गामा किरणन चैम्बर, आयन वर्णलेख, मल्टी चैनल एनालाइजर आदि मौजूद थे।

आज इस बहु–शैक्षणिक केन्द्र के पास ऊतक सम्वर्द्धन, कीटविज्ञान और पौध रोग विज्ञान सहित भौतिक विज्ञान, कृषि भौतिक विज्ञान, जल विज्ञान, मृदा विज्ञान, भौतिक रसायन विज्ञान, जैव रसायन विज्ञान, पौध कायिकी, पौध वर्द्धन तथा आनुवंशिकी जैसे विविध विषयों से संबंधित वैज्ञानिक मौजूद हैं। आज, एनआरएल के वैज्ञानिक विविध अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों के सलाहकार तथा विविध राष्ट्रीय समितियों के सदस्य हैं।

भारत में प्रति वर्ष फसल कटाई पश्चात् संरक्षण के दौरान होने वाले वाली हानि के कारण 20 से 30 प्रतिशत तैयार फसलों, खाद्यान्नों एवं दालों की हानि हो जाती है। एनआरएल ने दाल, सोयाबिन, सब्जी, फल, गेहूं और चावल जैसे विभिन्न कृषि उत्पादों के संरक्षण के लिए गामा किरणन तकनीकों के विकास एवं सम्वर्द्धन द्वारा इस हानि को कम करने का प्रयास किया है। उपकरणों का प्रदर्शन करते हुए डॉ. शांता नागराजन, वैज्ञानिक प्रभारी ने कहा, ''सूखे की स्थितियों के कारण होने वाली हानियों से मुकाबला करने के लिए हम अपने शोधकर्त्ताओं को फसलों के संकरित या उन प्रकारों को पहचानने में पौध संवर्द्धकों की सहायता करने के लिए कह रहे हैं जो गैर–आक्रमणकारी नाभिकीय चुम्बकीय अनुनाद तकनीकों का इस्तेमाल कर उपलब्ध जल के सर्वोत्तम उपयोग को संभव बनायें।'' पहले भी उन्होंने और उनके सहकर्मियों ने तिलहनों में तेल की मात्रा के निर्धारण के लिए नाभिकीय चुम्बकीय अनुनाद का इस्तेमाल किया है तथा पौध सम्वर्द्धकों द्वारा आजकल उच्च उत्पादकता वाले संकरों के विकास के लिए और जर्मप्लाज्म पदार्थों के मूल्यांकन में गैर–आक्रमणकारी तीव्र तकनीक का उपयोग किया गया है। रबर अनुसंधान संस्थान, कोट्टायम ने सूखे रबर की मात्रा का अनुमान लगाने के लिए इस तकनीक को अपनाया है।

इसी प्रकार एक युवा पौध कायिकी विशेषज्ञ एवं पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक डॉ. भूपेन्द्र सिंह गेहूं जैसी बहुत–सी फसलों के विशिष्ट प्रकार को पहचानने में नाभिकीय तकनीकों का इस्तेमाल कर रहे हैं, जो मृदा से पोषक या सूक्ष्म पोषकों को अवशोषित करने में ज्यादा सक्षम हों, अथवा खूले मैदानों में प्रधान रूप से मौजूद सूखा, गर्मी, जल जमाव, मृदा अम्लता जैसे विभिन्न तनावों के प्रति अधिक प्रतिरोधी हों। प्रयोगशाला दिखाते हुए डॉ. सिंह ने बताया, ''हमारे अध्ययन फसलों के उन विशिष्ट प्रकारों को पहचानने में पौध सम्वर्द्धकों को सहायता पहुंचाते हैं, जो गंगा की पेटी में प्रबलता से मौजूद जस्ता की कमी वाली मृदाओं में भी जीवित रह सकते हैं।''

डॉ. पी.एस. दत्ता, निदेशक, एनआरएल के साथ साक्षात्कार

पी.एस. दत्ता

आईआईटी कानपुर से परास्नातक और डॉक्टरेट उपाधि प्राप्त डॉ. दत्ता ने आईआईटी कानपुर और भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद में नाभिकीय तकनीकों का इस्तेमाल कर कई नदी बेसिनों के भू–जल पर अपना प्रारंभिक अध्ययन किया। आज वह भू–जल संग्रहण एवं प्रबंधन के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय स्तर के मान्यताप्राप्त विद्वान हैं। अन्य सम्मानों के साथ पर्यावरण संबंधी अध्ययन के लिए अंतर्राष्ट्रीय जेयाद पुरस्कार विजेता डॉ. दत्ता आज राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व की विभिन्न समितियों से सम्बद्ध हैं तथा जल संबंधी विभिन्न संगठनों के सलाहकार हैं। 2002 में, वह राष्ट्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला, नयी दिल्ली के निदेशक पद पर नियुक्त हुए। देश एवं विश्व भर में वर्तमान कृषि व्यवस्था में एनआरएल की भूमिका अद्वितीय है।

दिलीप एम. सालवी: कृषि अनुसंधान में एनआरएल की प्रमुख भूमिका क्या है?

निदेशक: देखिये, हर कोई कहता है कि कृषि कार्य तीव्र गति से आधुनिक हो रहे हैं। इसका क्या तात्पर्य है? इसका तात्पर्य यह है कि कृषि अब किसानों की बुद्धिमता और सीमित अनुभव पर आधारित नहीं रही, जिसका इस्तेमाल हमारे पूर्वज अति प्राचीन काल से करते आ रहे हैं। आज खेती का प्रत्येक पहलू; वह बीज, मृदा, उर्वरक, हानिकारक जीव, कीटनाशक, मौसम, जल उपलब्धता आदि ही क्यों न हो; प्रथमत: उनका पर्याप्त रूप से अध्ययन किया गया ताकि जब खेत में फसल काटा जाये तो वह अधिकतम उत्पादन प्रदान करे। यहां तक कि एक पौध सम्वर्द्धक को उन संकरित प्रजातियों के किस्मों के सृजन के लिए सही आनुवंशिक सूचना जानने की आवश्यकता है जिन्हें वह उत्पादित करने की इच्छा रखता है। पहले, एक बार फसल कटने के बाद किसान का काम खत्म हो जाता था। अब ऐसा नहीं है। कटे फसलों को बाजार भेजने के पूर्व सही तरीके से संग्रहित, प्रसंस्करित एवं संरक्षित करना चाहिए, ऐसा न हो कि उसमें कीड़े लग जायें या वह कीटों द्वारा खा लिया जाये।

पिछले तीन दशकों से अधिक समय से, एनआरएल ने नाभिकीय विकिरण एवं समस्थानिकों का इस्तेमाल कर आधुनिक खेती के विविध पहलुओं यथा– संकरित किस्मों की आनुवंशिकी से लेकर मृदा स्थितियों; विभिन्न फसलों द्वारा पोषक उद्ग्रहण; जल के अभिष्टतम उपयोग, भू–जल संग्रहण एवं प्रबंधन, फसल कटाई पश्चात् संरक्षण व्यवहार; तक पर अध्ययन संचालित किये गये हैं। इसने इन अध्ययनों को संचालित करने के लिए कई नाभिकीय तकनीक, कार्यविधियां और तरीके विकसित किये हैं, जो देश एवं विश्व भर के किसानों, कृषि वैज्ञानिकों, जल विज्ञानियों और कृषि–उद्यमियों के लिए महत्त्वपूर्ण रूप से उपयोगी हैं।

दिलीप एम. सालवी: एनआरएल अपने अध्ययनों और अनुसंधानों के बारे में उन लोगों को कैसे बताता है, जिनको इनकी सबसे अधिक आवश्यकता होती है?

निदेशक: हम संचार के विविध साधनों का इस्तेमाल करते हैं। हम अपने निष्कर्षों को विभिन्न सम्मेलनों, सेमिनारों, कार्यशालाओं आदि में प्रस्तुत करते हैं, जिनमें संबंधित वैज्ञानिक उपस्थित रहते हैं। हम विश्वविद्यालयों, अनुसंधान संगठनों और निजी प्रयोगशालाओं में काम कर रहे लोगों को प्रशिक्षित करते हैं; हम यहां तक कि उद्यमियों को भी प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। हम अपने अध्ययनों एवं निष्कर्षों के विविध पहलुओं पर पैम्फलेट; तकनीकी, अर्द्ध–तकनीकी और यहां तक कि लोकप्रिय प्रकाशन भी लेकर आते हैं। हम 'कृषि विज्ञान मेलों' और कृषि–उद्योगों द्वारा आयोजित अन्य निजी प्रदर्शनियों में भी भाग लेते हैं। हम किसानों और उद्यमियों के लिए प्रदर्शनियां भी लगाते हैं। हम 'विचार गोष्ठी' में भी भाग लेते हैं, किसानों की समस्याओं पर विचार–विमर्श करते हैं तथा उनको समाधान उपलब्ध कराते हैं।

अंतत: हमारे कर्मचारी किसानों और आम लोगों को लक्ष्य करके विभिन्न पत्रिकाओं एवं समाचार–पत्रों में हमारे अध्ययनों पर लोकप्रिय लेख भी लिखते हैं।

दिलीप एम. सालवी : क्या आप कृषि वैज्ञानिकों के अलावा लोगों को प्रशिक्षित करने के लिए कुछ कोर्स शुरू करने की योजना बना रहे हैं?

निदेशक: हां, हम कुछ अद्यतन वैज्ञानिक विषयों, जैसे, खाद्य प्रसंस्करण, जल संरक्षण एवं मूल्यांकन, कृषि में पर्यावरण संबंधी मुद्दे, और जैव–ईंधन निष्कर्षण से सम्बद्ध 5 से 6 माह अवधि के डिप्लोमा कोर्स शुरू करने की योजना बना रहे हैं। ये कोर्स विज्ञान स्नातकों के लिए होंगे।

दिलीप एम. सालवी : आपके अध्ययनों एवं तकनीकों के विस्तृत आबादी तक पहुंचने में कौन–सी समस्या सबसे बड़ी बाधक है?

निदेशक: कुछ भी नाभिकीय हो तो भय तो लगता है। वस्तुत: नाभिकीय विस्फोट ने आम आदमी के मन में कुछ भी नाभिकीय होने से भय का सृजन किया है। आजकल, लोग टेलीविजन देखते हैं, कम्प्यूटर पर काम करते हैं, मोबाइल फोन और माइक्रोवेव ओवन इस्तेमाल करते हैं, ये सभी विकिरण उत्सर्जित करते हैं जो उनके लिए हानिकारक होते हैं, लेकिन कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तिगत स्वास्थ्य के प्रति सचेत नहीं रहता। किन्तु ज्यों ही वे 'नाभिकीय' शब्द सुनते हैं, वे भयभीत हो जाते हैं और हमसे तथा हमारे अध्ययन से दूर रहना चाहते हैं।

दिलीप एम. सालवी : आपके प्रयोगशाला में और अधिक उपयोगी एवं प्रभावकारी अनुसंधान के लिए भविष्य की क्या योजना है?

निदेशक: हम अपनी गतिविधियों को निम्न तीन सुस्पष्ट कार्यक्रमों के साथ 'कृषि अनुसंधान हेतु राष्ट्रीय भौतिक दस्तावेज सुविधा' के रूप में पुनर्संगठित करने की योजना बना रहे हैं: (a) फसल उत्पादकता और फसल कटाई पश्चात् भण्डारण क्षमता बढ़ाने के लिए भौतिक दृष्टिकोणों का अनुप्रयोग; (b) फसल पद्धति में पोषक पर्याप्तता का इस्तेमाल; तथा (c) परिवर्तनशील भूमि प्रयोग के तहत जल उपलब्धता में वृद्धि हेतु भू–जल रिचार्ज के परिमाणन के लिए समेकित जल–संग्रहण दृष्टिकोण।

दिलीप एम. सालवी : धन्यवाद

पिछले तीन दशकों से भी अधिक समय से, एनआरएल राष्ट्रीय महत्त्व की प्राथमिकताओं को प्राप्त करने का प्रयास करता आ रहा है तथा पर्यावरण सहनीय नयी तकनीकों और कार्य प्रणालियों का विकास किया है। उदाहरणस्वरूप, इसने पोषक उद्ग्रहण और विभिन्न पौधों में इसके प्रभावशाली इस्तेमाल; वातावरण में प्रबलता से विद्यमान सूखा, गर्मी, जल जमाव, मृदा अम्लता जैसे विविध तनावों के प्रति फसली पौधों की प्रतिक्रिया के जैवभौतिकी, जैव रसायन एवं कायिकी आधार; अनाजों एवं फलियों में मौजूद तत्वों, कार्बन और नाइट्रोजन के बीच के संबंधों; और कीटों एवं कीटनाशकों के बीच के संबंधों के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है; तथा फसल की गुणवत्ता एवं उत्पादकता में सुधार के लिए उपकरणीय तकनीकों का विकास किया है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, एक डीम्ड यूनिवर्सिटी, के संरक्षण में एनआरएल आजकल पौध कायिकी, पौध जैव रसायन, पौध जैवभौतिकी, पर्यावरण विज्ञान, मृदा विज्ञान, कीट विज्ञान और कृषि मौसम विज्ञान में परास्नातक एवं पीएच.डी. कोर्स मुहैया कराता है। इस समय तक लगभग 250 छात्रों ने पीएच.डी. की डिग्री प्राप्त की है तथा 200 से अधिक लोग इस प्रयोगशाला में नाभिकीय और संबंधित तकनीकों में प्रशिक्षित किये गये हैं। डॉ. ए.वी. मोहरिर, अध्यक्ष, कृषि भौतिकी प्रभाग ने कहा, ''हम अपने छात्रों को एक संतुलित खुराक प्रदान करते हैं, इस अर्थ में कि हमारे यहां कुछ मूल कोर्स हैं जिसके तहत हम कृषि के सभी आधारभूत बातें पढ़ाते हैं। उसके बाद छात्र अपने क्षेत्र विशेष से संबंधित अध्ययन के लिए समस्या में स्वयं रुचि लेते हैं।'' भारत के अति महत्त्वपूर्ण औद्योगिक फसलों में से एक कपास की संरचनात्मक विशेषताओं के एक विशेषज्ञ का कहना है कि एनआरएल ने सुदूर संवेदन के क्षेत्र में उल्लेखनीय अध्ययन किये हैं। उन्होंने कहा, ''हमने अंतरिक्ष से किरणन प्रतिबिम्बों का इस्तेमाल कर नारियल में रूटविल्ट

शेष पृष्ठ ....19 पर जारी

शिवराज रामशेषन

विज्ञान को समर्पित एक जीवन

❑ रिन्टू नाथ
e-mail: rnath@vigyanprasar.com

वह 29 दिसम्बर, 2003 का दिन था। भारत में वैज्ञानिक समुदाय के लिए यह काफी दुख भरा दिन था क्योंकि इसी दिन हम लोग प्रोफेसर शिवराज रामशेषन को अश्रुपूर्ण विदाई दे रहे थे। वे महान्तम वैज्ञानिकों में से एक थे, जिन पर सभी भारतीयों को गर्व का अनुभव होता है। वह वैज्ञानिक जगत के अति प्रतिष्ठित और सुप्रसिद्ध व्यक्तित्व रहे हैं। उन्होंने पांच दशक से अधिक समय के अपने व्यावसायिक कैरियर में प्रकाशिकी, एक्स–रे क्रिस्टल विज्ञान, संघनित पदार्थ भौतिकी, पदार्थ विज्ञान आदि जैसे विविध विषयों में काम किया था। रामशेषन के अनुसंधान कार्यों में भारत के प्रथम उपग्रह आर्यभट के लिए पहले अक्ष विचलन अवमंदक की डिजाइनिंग और संविरचन से लेकर भारत के पहले हृदय वाल्व कृत्रिमांग योजन के लिए पदार्थ एवं प्रक्रिया के निर्धारण तथा विलवणीकरण के लिए संरध्र नलिका तक विस्तृत क्षेत्र शामिल थे। हालांकि, रामशेषन को सिर्फ ऐसे वैज्ञानिक के रूप में पहचानना गलत होगा कि उन्होंने अपने चुने हुए क्षेत्रों में ही सभी बारीकियों के साथ पूर्णाधिपत्य स्थापित किया। वास्तव में, उनका योगदान मात्र बहुत–से विषयों में वैज्ञानिक ज्ञान के सम्वर्द्धन में ही महत्वपूर्ण नहीं था, बल्कि भारत में वैज्ञानिक आंदोलन को आगे बढ़ाने में उनका प्रभाव उससे भी कहीं बढ़कर था। उन्होंने विश्व मानचित्र पर भारतीय विज्ञान को स्थापित करने की संकल्पना को सम्बल प्रदान किया। उच्च परिस्थिति वाले हमारे वैज्ञानिक संगठनों, संस्थानों और अकादमियों में से कुछ की नींव के पीछे वह भी मौजूद थे। देश में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में संलग्न अति विशिष्ट लोगों में से वह एक थे।

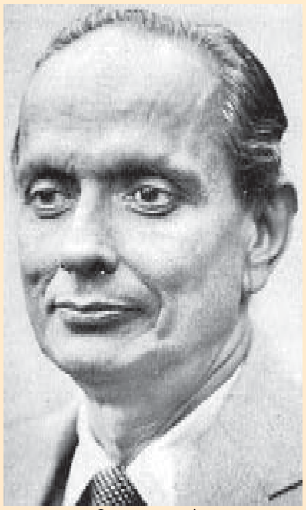
शिवराज रामशेषन

रामशेषन नोबेल पुरस्कार से सम्मानित अपने चाचा भौतिकविद् सी.वी. रमन की छाया में बड़े हुए तथा उनके जीवन से प्रेरणा प्राप्त की। उन्होंने 1943 में साइंस कॉलेज, नागपुर से स्नातक की डिग्री प्राप्त की। उन्होंने अपने डॉक्टरीय कार्य की शुरुआत इंडियन इस्टीट्यूट ऑफ साइंस (आईआईएससी) में की तथा 1951 में नागपुर विश्वविद्यालय से अपनी डॉक्टरेट की डिग्री हासिल की। भौतिक विज्ञान में उनका वास्तविक प्रशिक्षण आईआईएससी में उनके चाचा के मार्गदर्शन में शुरू हुआ। उनका प्रारंभिक कार्यक्षेत्र चुम्बकत्व, अनुचुम्बकीय अनुनाद और प्रकाशिकी से संबंधित था। हालांकि 1950 के दशक के प्रारंभ और 1960 के दशक में अपने कैरियर के रूप में क्रिस्टल विज्ञान को लेने का निर्णय लिया, जब वह आईआईएससी के भौतिक विज्ञान विभाग के अध्यापकमंडल के सदस्य थें 1954 में उन्हें ब्रुकलिन पॉलीटेक्नीक, न्यूयार्क में एक लब्ध प्रतिष्ठित विजिटिंग वैज्ञानिक के रूप में आमंत्रित किया गया था, जहां उन्होंने निम्न तापीय क्रिस्टल विज्ञान पर काम किया। क्रिस्टल विज्ञान में उनका योगदान नयी विधियां स्थापित करना है, जो जैविक अणुओं सहित जटिल अणुओं की क्रिस्टलीय संरचनाओं के निर्धारण में इस्तेमाल होती हैं।

1962 में उन्होंने आईआईएससी छोड़ दिया और मद्रास में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष, भौतिक विज्ञान विभाग के रूप में नियुक्त हुए। उन्होंने आईआईटी, मद्रास में क्रिस्टल विज्ञान समूह की स्थापना की। यद्यपि वह आईआईटी में अपेक्षाकृत काफी कम समय के लिए रहे, इसके बावजूद उन्होंने अपने विचारों, व्याख्यानों और अनुसंधान कार्यों के माध्यम से अपने छात्रों एवं सहकर्मियों पर अपनी दीर्घजीवी छाप छोड़ी।

1964 में उन्होंने नोबेल पुरस्कार विजेता प्रोफेसर डोराथी हौजकिन की ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय स्थित प्रयोगशाला की यात्रा की, जहां उन्होंने वृहत् जैविक संरचनाओं की क्रमिक समस्या पर काम किया। 1966 में वह बंगलौर वापस आ गये तथा राष्ट्रीय वैमानिकी प्रयोगशाला (एनएएल) (वर्तमान में इसे नेशनल एयरोस्पेस लेबोरट्रीज कहा जाता है) में पदार्थ विज्ञान प्रभाग की स्थापना की। एनएएल में उनके द्वारा बनाया गया विश्वस्तरीय पदार्थ कार्यक्रम एयरोस्पेस अनुसंधान में स्वदेशी क्षमताओं के विकास में एक महत्वपूर्ण तत्व साबित हुआ है। उनके उल्लेखनीय योगदानों में क्रिस्टल विज्ञान, संघनित पदार्थ भौतिकी और पदार्थ विज्ञान में असंगत प्रकीर्णन विविधों पर किये गये उनके कार्य शामिल हैं। एनएएल में, 10.4 M व्यास वाले मिलीमीटर तरंग दूरदर्शी की सहायता संरचना और डिश के संविरचन को भी संगठित किया, जिसको मूल रूप से कैलटेक के रॉबर्ट लेगटॉन द्वारा डिजाइन किया गया था।

वह बहु–शैक्षणिक क्षेत्रों में अनुसंधान सम्पन्न करने में सक्षम थे। उनको तिरुअनंतपुरम स्थित श्री चित्रा तिरुनाल आयुर्विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान से विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में आमंत्रित किया गया था। इसने उनको पदार्थ विज्ञान से लेकर जैव पदार्थों और जैव–चिकित्सकीय यंत्रों के क्षेत्र में अपनी रुचियों को विस्तार प्रदान करने में समर्थ बनाया। इस संस्थान में वैज्ञानिकों के साथ उनके सहयोगात्मक कार्य का परिणाम *चित्रा* हृदय वाल्व के विकास के रूप में सामने आया। सिर्फ इन उपयोगी यंत्रों के विकास में ही नहीं, बल्कि वह इन प्रौद्योगिकियों को उद्योगों को हस्तांतरित करने में भी सहायक थे। उन्होंने उन यंत्रों के निर्माण के लिए उद्योग स्थापित करने की प्रक्रिया की पहल की तथा प्रयोगशाला अनुसंधान विकास और निर्माण के बीच संबंध बनाने में नेतृत्व प्रदान किया। वह इस संस्थान में विकसित रक्त बैग के उत्पादन संबंधी प्रौद्योगिकी के सफलतापूर्वक हस्तांतरण में संलग्न थे। इसने उनकी क्षमताओं को व्यावहारिक विज्ञान के क्षेत्र में विस्तार प्रदान किया। वह जैविक एवं औषधीय रसायनशास्त्र के क्षेत्र में एक अनुसंधान संस्थान एस्ट्रा रिसर्च सेंटर इंडिया के संस्थापकों में से भी एक थे, जिन्होंने उसके प्रशासनिक निकाय के प्रथम अध्यक्ष` रूप में सेवा की।

रामशेषन के चाचा सी.वी. रमन का 21 नवम्बर, 1970 को निधन हो गया। रमन एक लम्बी अवधि के लिए तीन संस्थानों – रमन अनुसंधान संस्थान (आरआरआई), भारतीय विज्ञान अकादमी तथा सामयिक विज्ञान संघ की अध्यक्षता की तथा उनका पालन–पोषण किया। उनकी मृत्यु के बाद उनकी विचारधाराओं को आगे बढ़ाने के लिए इन सभी संस्थानों पर ध्यान देने की आवश्यकता थी। रामशेषन ने अपने चाचा के गहन विचारों को गति प्रदान की, जिम्मेदारी अपने कंधे पर ले ली। रमन की अंतिम इच्छा के अनुसार, रमन अनुसंधान ट्रस्ट बनाया गया और रामशेषन को उस ट्रस्ट का सचिव नियुक्त किया गया, जिस पद पर वह प्रायः जीवन भर बने रहे। उन्होंने आरआरआई को 'विज्ञान की विभिन्न शाखाओं को शमिल कर, शिक्षण का एक महान केन्द्र' बनाने के लिए पुनर्निर्माण की शुरुआत की। उसके सपनों को साकार करने के लिए, उन्होंने इन संस्थानों के अनुसंधान की विषय–वस्तु परिभाषित की तथा संस्थान में आने के लिए देशभर में विशिष्ट लोगों को आकर्षित किया। अब आरआरआई भारत और विश्व के प्रमुख संस्थानों में से एक है।

1971 में रामशेषन को भारतीय विज्ञान अकादमी का उपाध्यक्ष निर्वाचित किया गया। अकादमी की पुनर्संरचना के उद्देश्य से उन्होंने भारतीय विज्ञान अकादमी से वैज्ञानिक प्रकाशनों की आवश्यकता महसूस की। उनके सतत् प्रयास और प्रेरक बल की वजह से भौतिक विज्ञान संबंधी जर्नल *प्रमाण* 1973 में अस्तित्व में आया। यह भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी और भारतीय भौतिक विज्ञान संघ के सहयोग से प्रकाशित हुआ। वह इस जर्नल के संस्थापक सम्पादक थें उन्होंने इस जर्नल में साथी समीक्षा प्रणाली की शुरुआत की। अपने आरंभिक वर्षों में, *प्रमाण*

ने भारत से भौतिक विज्ञान पर कुछ सर्वश्रेष्ठ शोध–पत्रों को आकर्षित किया। बाद में जर्नल में खगोल शास्त्र, जीवविज्ञान, आनुवंशिकी और पदार्थ विज्ञान जैसे क्षेत्रों के विभिन्न विषयों को शामिल किया गया। अकादमी की कार्रवाइयां विभिन्न विषय क्षेत्रों को शामिल करने से भी पहचानी जाती है। कार्रवाइयों का भाग 'ए' रासायनिक विज्ञानों, गणितीय विज्ञानों तथा पृथ्वी और ग्रहीय विज्ञानों में विभाजित था। भाग 'बी' पौध विज्ञानों, पशु विज्ञानों और प्रयोगिक जीवविज्ञान (बाद में जिसका नाम जैव विज्ञान रखा गया) में विभाजित था। 1977 में, रामशेषन अकादमी के प्रकाशनों के प्रथम संपादक नियुक्त किये गये थे, जिस पद पर वह 1982 तक थे। बाद में वह अकादमी के तत्वावधान में एक दूसरा जर्नल *करेंट साइंस* भी लेकर आये, जिसकी शुरुआत 1932 में की गयी थी।

1979 में, उन्होंने संयुक्त निदेशक के रूप में आईआईएससी में कार्यभार ग्रहण किया और उसके बाद 1981 में वे संस्थान के निदेशक बने। इस अवधि के दौरान, उन्होंने 1983 से 1985 तक तीन वर्ष के लिए भारतीय विज्ञान अकादमी के अध्यक्ष के रूप में सेवा भी की। 1984 में, रामशेषन आईआईएससी के निदेशक पद से सेवानिवृत्त हुए। लेकिन यह महज अपने सपनों के लिए और अधिक गहनता से प्रयास करने हेतु एक विलक्षण उत्तर–सेवानिवृत्ति की शुरुआत भर थी। उन्होंने प्रौद्योगिकियों के विकास और प्रचार–प्रसार में तथा प्रौद्योगिकी विकल्पनों से संबंधित उद्योगों तथा अनुसंधान व विकास संस्थानों को सुझाव देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। वह विज्ञान व प्रौद्योगिकी नीति और औद्योगिक विकास के लिए जिम्मेदार निकायों के साथ भी संबद्ध रहे।

1989 में रामशेषन ने *करेंट साइंस* के सम्पादक का कार्यभार सम्भाला। यह जर्नल काफी पुराना था और अधिक पढ़े जाने वाले अंतर–शैक्षणिक विज्ञान जर्नल के रूप में इसका एक प्रभावशाली अतीत था। जर्नल के सम्पादक के रूप में उन्होंने जर्नल को नव जीवन प्रदान करने का जिम्मा उठाया। करेंट साइंस को भारत से प्रकाशित अति महत्वपूर्ण जर्नलों में से एक बनाने में जैसा कि आज हम देखते हैं, वह सहायक थे। उन्होंने 'इस अंक में' नामक स्तंभ को काफी विस्तार से लिखा, जिसमें जर्नल की विषय–सूची की झलकियां समाहित होती थीं। उन्होंने जर्नल में अद्यतन खोजों के बारे में 'रिसर्च न्यूज', महत्वपूर्ण मुद्दों पर अनुसंधान, विचार–विमर्श और वाद–विवादों से संबंधित प्रमुख विषयों पर 'रिव्यू आर्टिकल्स' आदि जैसे विशिष्ट भागों की शुरुआत की। उन्होंने स्वयं घटनाओं और लोगों के संस्मरण लिखे। वह भारत में विज्ञान अनुसंधान एवं शिक्षा के विकास के पांच दशकों के दौरान सर्वाधिक अधिकृत व्यक्तियों में से एक थे जिन्हें लोगों एवं घटनाओं के बारे में इतने विस्तृत व्यक्तिगत अनुभव थे। ऐसा उनके द्वारा बनाये गये देश के सर्वाधिक प्रभावशाली वैज्ञानिकों के व्यंग्यात्मक चित्रों में से कुछ में प्रतिबिंबित होता था, जिनमें रमन, चन्द्रशेखर, हरीश चन्द्र, भाभा, साराभाई, महालनोबिस शामिल थे।

वह रमन अनुसंधान संस्थान (आरआरआई), बंगलोर में विजिटिंग शिक्षक और प्रतिष्ठित प्रोफेसर – इमेरिटस थे। अपनी वृद्धावस्था के बावजूद, उन्होंने आरआरआई की पुस्तकालय सुविधाओं का निरंतर इस्तेमाल किया तथा एक युवा उत्साही की भांति सेमिनारों और जर्नल क्लब बैठकों में भाग लिया। उनके शब्दों में, यह उनके 'मन एवं मस्तिष्क को तुलनात्मक रूप से सक्रिय' रखता था। वह आरआरआई में जीवनपर्यंत आते रहे।

वह सी.वी. रमन की चित्रमय जीवनी के स्वयं रमन और सी. रामचन्द्र राव के साथ सह–लेखक थे। उन्होंने 'सी.वी. रमन के वैज्ञानिक शोध–पत्रों' पर दो पुस्तकों का सम्पादन भी किया। अपने लम्बे प्रभावशाली कैरियर के दौरान, उनको बहुत से पुरस्कारों एवं उपाधियों से सम्मानित किया गया था, जिनमें एस.एस. भटनागर पुरस्कार (1966), वास्विक पुरस्कार (1980), इन्सा आर्यभट मेडल (1985) और पद् भूषण शामिल थे।

रामशेषन हमेशा उत्कृष्टता के भूखे थे तथा उन्होंने विज्ञान की उच्चतम गुणवत्ता के अनुसरण में भावाकुल होकर अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। वह भारतीय वैज्ञानिकों को समान गुणवत्ता को प्राप्त करते देखना चाहते थे ताकि उनको पूरे विश्व में पहचाना जा सके। उन्होंने इस दिशा में सभी वैज्ञानिकों को प्रेरित किया और स्वयं नेतृत्व किया। रामशेषन के जीवन की उत्कृष्टता एवं सरलता के आदर्श संयोजन को उनके पुराने मित्रों में से एक सी.एन. राव ने अपने निम्न शब्दों के माध्यम से बहुत खुबसूरती से चित्रित किया है : ''वह घमंडी हुए बिना उत्कृष्टता के लिए संघर्ष करते रहे। उन्होंने अपनी उपलब्धियों और स्वीकृति को काफी हल्के से लिया। वह आडंबर हुए बिना एक अच्छे सम्प्रेषक थे। वह लोगों को प्यार करते थे, क्योंकि यह उनका स्वभाव था। उन्होंने जीवन को प्यार किया और सरलता से हंसे। वह जहां भी रहे, पृष्ठभूमि में संगीत के साथ पुस्तक पढ़ते रहे हैं और एक नये विज्ञान जर्नल की योजना बनाते रहे।''

हम वास्तव में एक समर्पित, उत्साही और असाधारण वैज्ञानिक, शिक्षक ओर मार्गदर्शक की बहुत अधिक कमी महसूस करेंगे।

स्रोत : शिवराज रामशेषन के प्रभावशाली व्यक्तिगत संबंधों के विवरण प्रस्तुत करने वाले सी.एन. राव और पी. बलराम के प्रति आभार। ये लेख करंट साइंस की वेबसाइट http://tejas.serc.iisc.emet.in/~currsci/ से प्राप्त किए जा सकते हैं।

अनुवादक : अनिल कुमार द्विवेदी

ullet ullet ullet

नाभिकीय...... पृष्ठ 17 का शेष

रोग की पहचान की है तथा देश में पहली बार इसके वायरस को भी पहचाना है।''

वस्तुतः एनआरएल में संचालित अधिकांश परियोजनाएं स्वभावतः अंतर–शैक्षणिक हैं। विभिन्न अंतर–शैक्षणिक अध्ययनों के लिए, यह केन्द्र सिर्फ पूसा परिसर में अवस्थित भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के विभिन्न प्रभागों के साथ ही नहीं, बल्कि विभिन्न राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा अभिकरण, वियना; राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला, नयी दिल्ली; भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद; भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई; केन्द्रीय भू–जल बोर्ड, नयी दिल्ली; राष्ट्रीय राजधानी नियोजन बोर्ड, नयी दिल्ली; राष्ट्रीय सुदूर संवेदन अभिकरण, हैदराबाद; भारतीय मौसम विज्ञान विभाग, नयी दिल्ली; और बहुत–से कृषि विश्वविद्यालयों एवं संगठनों के साथ भी मिलकर काम करता है।

डॉ. दत्ता ने भू–जल संबंधी अपने अध्ययनों के दिलचस्प निष्कर्षों में से एक का उल्लेख करते हुए कहा, ''दिल्ली और उसके आस–पड़ोस में वर्षा का अधिकांश हिस्सा बंगाल की खाड़ी से नहीं, वरन् अरब सागर से आता है।''

भू–जल प्रबंधन के मामले में अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के विद्वान, डॉ. दत्ता ने नाभिकीय तकनीक का इस्तेमाल कर दिल्ली और उसके आस–पड़ोस में भू–जल निकायों से संबंधित विस्तृत अध्ययन किया है। वह कहते हैं कि औद्योगिक एवं अन्य अपशिष्टों की अंधाधुंध डम्पिंग के कारण दिल्ली और उसके आस–पास अंतर्भू–जल स्थिति चिन्ताजनक है। उन्होंने जोर दिया, ''हमारे निष्कर्षों को कार्यस्थल परिस्थिति के साथ समेकित करने की आवश्यकता है। यह सिर्फ अंतर्भू–जल संबंधी हमारे निष्कर्षों के लिए ही उपयुक्त नहीं है, बल्कि उन सभी कृषि संबंधी अध्ययनों के बारे में भी सही है जिन्हें हमने एनआरएल में संपन्न किया।'' औपचारिक और अनौपचारिक रूप से, उन्होंने व्यक्तियों, संगठनों, विश्वविद्यालयों, गैर–सरकारी संगठनों, विस्तृत कामगारों और यहां तक कि राजनीतिज्ञों से कृषि एवं जल प्रबंधन संबंधी अपने प्रयासों में सहयोग करने के लिए संदेश प्राप्त किया। लेकिन, उन्होंने कहा कि, परिस्थिति में सुधार के लिए सुनियोजित एवं सुदीर्घ प्रयास का अभाव दिख रहा है।

अनुवादक: अनिल कुमार द्विवेदी

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अभिनव उपलब्धियां

प्रयोगशाला में पदार्थ के नये रूप का सृजन

पदार्थ के बहुप्रतीक्षित नये रूप का सृजन पहली बार कर लिया गया है। इस पदार्थ को फर्मोनिक कंडेनसैट कहा गया है। नये कंडेनसैट के सृजन को कमरे के तापक्रम पर काम करने वाले अतिचालकों के उत्पादन की दिशा में महत्वपूर्ण पहला कदम माना गया है।

ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के भौतिकविद् कीथ बरनेट का कहना है, ''यह एक बहुत बड़ी सफलता है।'' वे कहते हैं कि कोलोरैडो विश्वविद्यालय के अनुसंधानकर्ता जिन्होंने इस कार्य को अंजाम दिया है, ''गजब के प्रयोगकर्ता'' हैं। वे आगे कहते हैं कि विश्वभर के वैज्ञानिक इस पदार्थ को सृजित करने में आने वाली तकनीकी चुनौतियों से निजात पाने के लिए प्रयत्नशील हैं।

ज्यादा परेशानी फर्मीक्ट्रॉन के स्वभाव को लेकर रहती है। ये प्रोटॉन, न्यूट्रॉन और इलेक्ट्रॉन जैसे अपरमाणविक कण होते हैं जिनके अर्द्ध–पूर्णांक प्रचक्रण (1/2, 3/2 आदि) होते हैं तथा परमाणुओं में कणों के विषम अंक शामिल होते हैं।

बोसोन, प्रारंभिक कण का एक अन्य प्रकार जिसमें पूर्णांक प्रचक्रण (1, 2, 3 आदि) होते हैं, के विपरीत समरूप फर्मीयॉन को समान अवस्था की सहभागिता से क्वांटम भौतिकी के सिद्धांतों द्वारा रोका जाता है। उदाहरण के लिए, समरूप फर्मीयॉन एक ही स्थान या संवेग की हिस्सेदारी नहीं कर सकते। लेकिन फोटॉन, जो बोसोन होते हैं, ऐसा कर सकते हैं, जिस कारण लेजर कार्य करते हैं।

दो फर्मीयॉन, जो एक अणु में मजबूती से बंधे होते हैं, बोसोन होते हैं क्योंकि उनके प्रचक्रण एक पूर्णांक मूल्य जोड़ते हैं, लेकिन कोलोरैडो प्रयोग के अनुसार फर्मीऑन उतनी मजबूती से जुड़े नहीं होते। हालांकि वे लगभग एक सेकंड के दस हजारवें भाग के लिए समान संवेग की हिस्सेदारी करने हेतु बोसोन की तरह व्यवहार करते हैं।

स्रोत : न्यू साइंटिस्ट डॉट कॉम

प्रकाश उत्सर्जित करने वाला ट्रांजिस्टर

प्रकाश उत्सर्जित करने वाला ट्रांजिस्टर, जो प्रकाश इलेक्ट्रॉनिक्स के साथ ही साथ इलेक्ट्रॉनिक्स में ट्रांजिस्टर को मूलभूत तत्व बना सकेगा, को उरबाना अभियान के तहत इलिनोइस विश्वविद्यालय के प्रोफेसर निक होलोन्याक जूनियर और मिल्टन फेंग द्वारा खोजा गया है। उनकी खोज संबंधी वैज्ञानिकों की रिपोर्ट अप्लायड फीजिक्स लेटर नामक जर्नल में प्रकाशित हुई।

इलिनोइस में इलेक्ट्रिकल एवं कम्प्यूटर इंजीनियरिंग तथा भौतिक विज्ञान के जॉन बार्डिन प्रोफेसर होलोन्याक ने कहा कि हम लोगों ने विषय–संयोजन द्विध्रुवीय ट्रांजिस्टर के आधारभूत स्तर से प्रकाश उत्सर्जन प्रदर्शित किया है तथा यह दिखाया है कि प्रकाश की तीव्रता आधारधारा को बदलकर नियंत्रित की जा सकती है। होलोन्याक ने प्रथम व्यावहारिक प्रकाश उत्सर्जक डायोड तथा दृश्य स्पेक्ट्रम में लेजर को संचालित करने के लिए प्रथम अर्द्धचालक का आविष्कार किया।

सामान्यत: एक ट्रांजिस्टर के दो पोर्ट होते है। – पहला इनपुट के लिए और दूसरा आउटपुट के लिए। हमारे नये यंत्र में तीन पोर्ट हैं – पहला इनपुट, दूसरा इलेक्ट्रिकल आउटपुट और तीसरा ऑप्टिकल आउटपुट के लिए। इसका तात्पर्य यह है कि हम प्रदर्शन या संचार उद्देश्यों के लिए ऑप्टिकल और इलेक्ट्रिकल सिग्नल का अंतर्संयोजित कर सकते हैं। परम्परागत ट्रांजिस्टर जो सिलिकॉन और जर्मेनियम से बना होता है, के विपरीत प्रकाश उत्सर्जक ट्रांजिस्टर इंडियन गैलियम फॉस्फाइड तथा गैलियम आर्सेनाइड से निर्मित होते हैं।

स्रोत : अप्लायड फिजिक्स लेटर, जनवरी 2004

जब ठोस द्रव की भांति बहेंगे

एएफपी बताती है कि संयुक्त राज्य अमेरिका के शोधकर्ताओं को विश्वास है कि उन्होंने पदार्थ के एक नये चरण 'सुपरसॉलिड' का निर्माण किया है जो द्रव की तरह प्रवाहित होता है। पेनसिल्विया स्टेट यूनिवर्सिटी के भौतिकविद् इयून–सेओंग किम और मोजेज चान *नेचर* के अंक में अपने कामों की रिपोर्टिंग करते हुए कहते हैं कि उन्होंने परमाणु के आकार के रोम छिद्रों से छिद्रित एक स्पंज की तरह के ग्लास डिस्क में द्रव हीलियम–4 जब प्राय: परम शून्य (–273 सेल्सियस, –459.69 फारेनहाइट) तक एक डिग्री के एक हिस्से तक इसको ठंडा करके संघनित किया।

छिद्र से भरे ग्लास को एक न रिसने वाले कैप्सूल में रखा गया, जिसका दबाव क्रमश: बढ़ता गया। जब वह वायुमंडलीय दबाव से 40 गुना ज्यादा हो गया, तब हीलियम ठोस बन गया लेकिन सुपरफ्लूइड्स नामक पदार्थों को उल्लेखनीय घर्षणरहित प्रवाह के साथ गुजरते हुए पाया गया। सुपरफ्लूइड्स में सभी परमाणु समान क्वांटम अवस्था में रहते हैं, जिसका तात्पर्य यह है कि उन सभी का संवेग समान होता है – यदि एक चलता है, तो सभी चलने लगते हैं।

यह सुपरफ्लूइड्स को सूक्ष्म दरारों से भी घर्षण मुक्त गति से सक्षम बनाता है। वास्तव में, सुपरफ्लूइड्स हीलियम यहां तक कि जार के किनारों और ढक्कन के ऊपर से भी बह जाता है। जब सभी कणों को उस अति तापक्रम पर ठंडा किया जाता है जहां वे सभी एक समान क्वांटम यांत्रिक अवस्था में प्रवेश कर जाते हैं तब अतितरलता (सुपरफ्लूइडिटी) उस घटना के परिणामस्वरूप घटित होती है जिसे बोस–आइंस्टीन संघनीकरण कहा जाता है। गैसें भी बोस–आइंस्टीन संघनन के तरीके से प्रतिक्रिया करती हैं, लेकिन यह पहला प्रमाण है कि ठोस पदार्थ की तीसरी अवस्था भी एक सुपर अवस्था में प्रवेश कर सकता है।

स्रोत : पीटीआई न्यूज, फरवरी 2004

इसरो ने शुरू किया उपग्रह आधारित ई–लर्निंग

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने उपग्रह आधारित दूरस्थ ई–लर्निंग पहल संबंधी एक पायलट कार्यक्रम की शुरुआत की है। यहां एक स्टूडियो में दिया गया उद्घाटन व्याख्यान कर्नाटक राज्य के 113 इंजीनिरिंग कॉलेजों में से 70 में इनसैट 3ए उपग्रह द्वारा प्रसारित किया गया।

यह पायलट प्रोजेक्ट देशव्यापी कार्यक्रम की एक शुरुआत थी, जिसको सितम्बर में जीसैट3 (एडूसैट) उपग्रह के प्रक्षेपण के उपरांत प्रारंभ किया जाएगा। यह प्रौद्योगिकीय विश्वविद्यालय पायलट कार्यक्रम में भाग लेने वाले देश के तीन विश्वविद्यालयों में से एक है, अन्य दो हैं यशवंत राव चौहान विश्वविद्यालय, महाराष्ट्र और राजीव गांधी प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मध्य प्रदेश।

जीसैट3 (एडूसैट) चार प्रायोगिक पेलोड में से एक है जिनको इसरो ने अपने प्रक्षेपण यानों जीएसएलवी डी 1 से डी 4 द्वारा प्रक्षेपित करने की योजना बनायी है। प्रक्षेपण के पश्चात् जीसैट–3 अपनी तरह का पहला, एक समर्पित शैक्षिक सेवा उपग्रह होगा। उपग्रह पांच केयू–बैंड ट्रांसपोंडरों के माध्यम से साक्षरता, उच्चतर शिक्षा, और प्रशिक्षण संबंधी कार्यक्रमों को प्रसारित करने में सहायता करेगा। दो केयू–बैंड और छह विस्तारित सी–बैंड ट्रांसपोंडर पूरे भारत में अंतर्क्रियात्मक शिक्षा प्रदान करने के लिए शामिल किए गए हैं।

ई–लर्निंग कार्यक्रम के लिए 'विषय सूची' विकसित करने के लिए, वीटीयू ने वीटीयू कॉलेजों तथा भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान और भारतीय विज्ञान संस्थान जैसे प्रमुख संस्थानों से 'स्रोत व्यक्तियों' जिसमें प्राय: प्रोफेसर हैं, की पहचान की है।

स्रोत : ISRO.org

संकलन : कपिल त्रिपाठी

तारुण्य के छोटे–छोटे रहस्य

जब आपका शरीर खिलता और परिपक्व होता है

❑ डॉ. यतीश अग्रवाल
e-mail: dryatish@yahoo.com

दस वर्ष से अधिक की आयु सीमा में प्रवेश करने के बाद जल्दी ही आप एक बड़े परिवर्तन की प्रक्रिया से गुजरते हैं। आपका छोटा सा शरीर खिलना चाहता है। आपकी लंबाई और भार में एकाएक वृद्धि होने लगती है और जल्दी ही आपके यौन अंग परिपक्व होकर आपको एक वयस्क में रूपांतरित कर देते हैं। यही तारुण्य–प्राप्ति की अवधि होती है और हर लड़के तथा लड़की में इसके रहस्यों को जानने की उत्सुकता होती है। इसका कोई निश्चित समय नहीं होता, पर आम तौर पर लड़कियों में यह प्रक्रिया 9–10 साल की उम्र के आस–पास शुरू होती है। कुछ लड़कियों में यह प्रक्रिया 8 साल की उम्र से ही शुरू हो जाती है, जबकि कई अन्य लड़कियों में यह 13 साल की उम्र से शुरू होती है। लड़कों में इसकी शुरुआत दो–तीन साल बाद होती है। उनमें तारुण्य के लक्षण 10–15 साल की अवस्था के बीच कभी भी प्रकट हो सकते हैं। यदि आप तारुण्य की चौखट पर खड़े हैं, तो इन परिवर्तनों के बारे में पढ़िए। आपका शरीर जल्दी ही इनका अनुभव करने वाला है।

लड़कियों में होने वाले परिवर्तन

भारी परिवर्तन की इस अवधि में आपको अपने शरीर के आंतरिक अंगों और बाहरी आकृति, दोनों में अनेक परिवर्तनों का अनुभव होगा। आइए, उम्र के साल बढ़ने के साथ होने वाले परिवर्तनों पर एक निगाह डालें –

स्तन

लड़कियों में तारुण्य के प्रारम्भ के लक्षण सबसे पहले स्तनों के क्रमिक विकास के रूप में प्रकट होते हैं।

सबसे पहले स्तनाग्र और उसके आसपास के क्षेत्र का रंग बदलने लगता है और वहां उभार दिखाई देने लगता है। ऐसा उस क्षेत्र में रक्त का प्रवाह बढ़ने के कारण होता है।

उसके बाद स्तन के उतक फूल कर एक कलिका का रूप धारण कर लेते हैं और उसके आस–पास के परिवर्तित रंग वाले क्षेत्र, जिसे क्षेत्रिका कहते हैं, का और विस्तार हो जाता है।

तीसरे चरण में स्तन एवं क्षेत्रिका का और विस्तार होता है।

स्तन में और भराव आने पर वे पूरी तरह अभर आते हैं। अंततः स्तन पूरी तरह परिपक्व हो जाते हैं। स्तनाग्र स्पष्ट तौर पर बाहर निकल आता है, जबकि क्षेत्रिका स्तन की आकृति को सामान्य आकार देने के लिए पीछे की ओर झुक जाती है।

ये परिवर्तन 8–9 वर्ष की आयु में शुरू होते हैं और किशोरावस्था के अंतिम दौर में किसी समय पूरे हो जाते हैं। अक्सर एक स्तन का विकास दूसरे स्तन की अपेक्षा तीव्र गति से होता है। इससे चिंतित नहीं होना चाहिए। स्तनों की आकार वृद्धि सभी लड़कियों में एक समान नहीं होती। यह मुख्यतः आपकी शारीरिक संरचना पर निर्भर होती है। न तो आप इसमें वृद्धि कर सकती हैं और न ही इसे रोक सकती हैं।

जंघ–रोम

स्तनों का विकास शुरू होने के कुछ समय बाद ही जंघ रोम उगने लगते हैं। सबसे पहले वे आपकी योनि के बाह्य किनारों पर प्रकट होते हैं, उसके बाद जंघ अस्थियों पर अपेक्षाकृत अधिक घने और मोटे बाल उग जाते हैं। उसके बाद इन रोमों के क्षेत्र का और विस्तार हो जाता है तथा वे एक विलोम त्रिकोण जैसी आकृति निर्मित कर देते हैं। कुछ बाल जांघ के अंदरुनी हिस्सों पर भी उग जाते हैं।

बाह्य जननांग

योनि और भग्नासा, दोनों के बाह्य और आंतरिक ओष्ठों का क्रमिक विकास होता है। योनि से एक रंगहीन या सफेद रंग के तरल पदार्थ का स्राव हो सकता है। यह अत्यंत सामान्य प्रक्रिया है और इसका कारण अंदरुनी हिस्सों में स्थित कुछ ग्रंथियों से होने वाला स्राव है।

त्वचा

सेक्स हार्मोनों के प्रभाव के कारण तैल ग्रंथियों की सक्रियता बढ़ जाती है। इससे चेहरे की त्वचा अत्यधिक तैलीय हो जाती है, जिसके कारण अक्सर भद्दे मुंहासे निकल आते हैं। स्वेद ग्रंथियां भी अधिक सक्रिय हो जाती हैं लड़कियों में एक खास ढंग की गंध विकसित हो सकती है।

कांख के बाल

पहली माहवारी से कुछ महीने पहले ही आपकी कांख में बाल निकलने शुरू हो सकते हैं। यदि आप चाहें तो इन बालों को निकाल सकती हैं।

शरीर का आकार

तारुण्य प्राप्ति की अवधि में आपका शरीर भी नारी की प्राकृतिक आकृति प्राप्त कर लेता है। आपके नितंब गोलाकार हो जाते हैं और कमर अपेक्षाकृत पतली हो जाती है।

माहवारी का स्राव

आमतौर पर माहवारी स्तनों का विकास शुरू होने के दो साल और जंघ–रोमों के उगने के साल भर बाद शुरू होती है। इसका अर्थ यह है कि लड़कियों में माहवारी प्रायः 10 से 13 साल की उम्र के बीच शुरू हो जाती है। यदि 15 साल की आयु तक भी माहवारी शुरू न हो तो डाक्टर से परामर्श करना चाहिए।

शुरू के कुछ माहवारी चक्र काफी अनियमित होते हैं। शरीर की आंतरिक घड़ी को लय पकड़ने में कुछ समय लगता है और आपको इससे चिंतित नहीं होना चाहिए। माहवारी की अवधि में शरीर की सफाई का पूरा ध्यान रखना चाहिए। इसके लिए सैनिटरी नैपकिन या टैंपोन का प्रयोग कीजिए। वैसे सैनिटरी नैपकिन का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक आसान है। माहवारी के बारे में यह कभी मत सोचिए कि यह गंदी चीज है या स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। ये और कुछ नहीं, बल्कि बच्चेदानी पर जमा हो गई गैर जरूरी पर्तें है। माहवारी का दूसरा चक्र शुरू होने के लिए इनका बाहर निकाला जाना जरूरी होता है।

सावधान रहने की हिदायत : माहवारी शुरू होने के साथ ही आपका शरीर हर महीने एक डिंब का सृजन करता है, अतः किसी पुरुष से सहवास करने पर आप गर्भ धारण कर सकती हैं।

लड़कों में होने वाले परिवर्तन

इस अवधि में लड़कों में भी अनेक महत्वपूर्ण शारीरिक परिवर्तन होते हैं। तारुण्य प्राप्ति के बाद उनमें यौन परिपक्वता आ जाती है। लड़कों में मुख्यत: ये परिवर्तन होते हैं।

अंडकोष

शिश्न के नीचे की थैली में दो अंडकोष होते हैं। 11–12 वर्ष की आयु में लड़कों के अंडकोष में वृद्धि होने लगती है। उनका व्यास दो सेमी या उससे भी अधिक हो जाता है और वे अधिक दोलनशील हो जाते हैं। लड़कों में तारुण्य का यह पहला लक्षण होता है। अगले चार–पांच सालों में इसमें और वृद्धि होती है और अंडकोषों का व्यास 4 सेमी. तक हो जाता है।

शिश्न

शिश्न की लंबाई और मोटाई दोनों में वृद्धि होती है। यह वृद्धि 12–13 साल की उम्र से शुरू होकर अगले तीन वर्षों तक जारी रहती है। उस समय तक यह पूरी तरह वयस्क आकार प्राप्त कर लेता है।

जंघ–रोम

13–14 साल की उम्र में जंघा क्षेत्र में कुछ महीने से रंजित रोम उगने शुरू होते हैं। जल्दी ही वे काले और घुमावदार हो जाते हैं। धीरे–धीरे वे बहुतायत संख्या में उग आते हैं और समय बीतने के साथ ये काले मोटे बाल पुरुष शरीर के पेट से लेकर जांघ के अंदरूनी हिस्से और वहां से गुदा द्वार तक के भाग को आच्छादित कर लेते हैं।

मुंह और कांख पर उगने वाले बाल

जंघ रोमों के उगने के कुछ समय बाद ही लड़कों की कांख में बाल उगने लगते हैं और फिर शीघ्र ही उनके चेहरे पर भी बाल उग जाते हैं। वैसे कुछ लोगों में आनुवंशिक कारणों से जंघा क्षेत्र और चेहरे पर काफी कम बाल हो सकते हैं। यह भी संभव है कि वहां बाल उगे ही न; पर इसका यह अर्थ नहीं होता कि उस व्यक्ति में प्रजनन शक्ति का अभाव है।

आवाज का बदलना

इस अवधि में लड़कों की आवाज भारी हो जाती है, और स्वर यंत्र के आकार में परिवर्तन होने के कारण कभी–कभी फट भी जाती है।

शरीर का आकार

लड़कों के शारीरिक अनुपात में भी परिवर्तन होता है। उनके कंधे अधिक चौड़े हो जाते हैं। लेकिन लड़कियों की तरह उनके नितंब भारी या गोलाकार नहीं होते।

तारुण्य प्राप्ति की अवस्था परिवर्तनों से भरी होती हे। इसके दौरान आप विकसित होकर एक युवा वयस्क बन जाते हैं। इन परिवर्तनों का स्वागत करने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि उन परिवर्तनों के स्वरूप और उनके घटित होने के संभावित समय के बारे में जाना जाय और उन्हें पूरे मन से स्वीकार किया जाय।

विज्ञान रेल...... पृष्ठ 1 का शेष

विज्ञान रेल 14 जनवरी, 2004 को कानपुर पहुंची तथा 17 जनवरी, 2004 तक वहां रुकी रही। श्री प्रशांत त्रिवेदी, जिलाधिकारी, कानपुर और प्रो. संजय गोविन्द ढान्डे, निदेशक आईआईटी, कानपुर ने संयुक्त रूप से प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। एक लाख से अधिक लोगों ने कानपुर में प्रदर्शनी देखी।

विज्ञान रेल का अगला पड़ाव इलाहाबाद में था जहां वह 18–23 जनवरी, 2004 के बीच में खड़ी रही। श्री रवीन्द्र नाथ त्रिपाठी, जिलाधिकारी, इलाहाबाद, प्रो. के.बी. पाण्डेय, अध्यक्ष, लोक सेवा आयोग, उ.प्र. और प्रो. एम.एस. कुलकर्णी, निदेशक, हरीश चन्द्र गणित व गणितीय भौतिकी अनुसंधान केन्द्र ने संयुक्त रूप से प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। उद्घाटन समारोह के दौरान उपस्थित अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति थे – प्रो. ए.के. गुप्ता, डीन, विज्ञान संकाय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय; प्रो. शिवगोपाल मिश्र, महासचिव, विज्ञान परिषद् प्रयाग; श्री बी.के. सिंह, एडीआरएम, इलाहाबाद; डॉ. अभिराज सिंह, पर्यावरण व वन मंत्रालय; तथा डॉ. विनय बी. काम्बले, निदेशक, विज्ञान प्रसार।

वाराणसी में विज्ञान रेल 24 से 28 जनवरी, 2004 के दौरान रुकी रही थी। प्रो. पी. रामचन्द्र राव, उपकुलपति, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, श्री देवशरण सिंह यादव, कमिश्नर, वाराणसी क्षेत्र और श्री आर.के. बंसल, डीआरएम, रेलवे ने प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। वाराणसी में एक लाख 25 हजार से अधिक लोगों ने विज्ञान रेल देखी।

लखनऊ में विज्ञान रेल

वाराणसी में विज्ञान रेल